नीम टूथ पेस्ट

की विशेषतायें...

भारतीय नीम के गुणों से भली भांति परिचित हैं, व यही कारण है कि प्राचीन काल से नीम के दातुन का प्रचलन होता आ रहा है. नीम के दातुन में जो जो रोग विरोधी, कृमिनाशक और मसूड़ों को बल देने वाले प्राकृतिक द्रव्य हैं, वे सब इस पेस्ट में सुरक्षित हैं. अलावा इस के आधुनिक दन्त-स्वास्थ्य शास्त्र में पायोरिया, और मुंह की दुर्गंध आदि को रोकने के लिए जो जो उपयोगी मुख्य रासायनिक द्रव्य बताए गए हैं, वे सब इस में सम्मिलित हैं. इस नीम टूथ पेस्ट के व्यवहार से दांत मोती की भांति चमकदार तो हो ही जाते हैं, इस के अतिरिक्त दांतों की व्याधियों से हमेशा के लिए छुटकारा मिल जाता है. रोज सुबह तथा सोने के पूर्व नीम पेस्ट का व्यवहार कीजिए. इसका अपूर्व लाभ आप स्वयं अनुभव करने लगेंगे. सर्वत्र प्राप्त है

अन्य टूथ पेस्टोंकी अपेक्षा
नीम टूथ पेस्ट
सर्वोत्कृष्ट।

Neem Tooth Paste

दि कैलकाटा
केमिकल कं० लि०
कलकत्ता-२९

शाखाएं:-

दिल्ली-२१,-दरियागंज,
बम्बई-प्रिंसेज स्ट्रीट देवकरण मैनसंस
मद्रास-५/-१४८ लाइन्स,
पटना-गोविन्द मित्र रोड.
नागपुर-सिताबर्डी अभ्यंकर रोड.
रांची-मेनरोड.

चन्दामामा

विषय-सूची

इनके अलावा फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता, मन बहलाने वाली पहेलियाँ, सुन्दर चित्र और कई प्रकार के तमाशे हैं।

डोंगरे का बालामृत

चन्दामामा

संचालक :: चक्रपाणी

हमारा धारावाही रत्न-मुकुट, जो पिछले छः महीनों से चल रहा था इस अङ्क से समाप्त हो जाता है। हम जानना चाहते हैं कि यह पाठकों को कैसा लगा। पिछले महीने से हम ने जातक-कथाओं का प्रकाशन भी शुरू कर दिया है। हम उनके बारे में भी पाठकों की राय जानना चाहते हैं। आशा है, पाठक लोग अपनी अपनी राय लिख कर चन्दामामा के संपादक के नाम भेज देंगे। हाँ, अगले महीने हमारा नया धारावाही 'शब्द-वेधी' शुरू होने वाला है। यह एक ऐतिहासिक कहानी है और बड़ी मनोरंजक है। इस में असंभव चमत्कार नहीं होंगे; मगर पग पग पर रोमांचकारी साहस-कृत्यों का वर्णन होगा। आशा है कि यह भी हमारे पाठकों को रत्न-मुकुट से भी ज्यादा पसंद आएगा। हाँ, पाठक यह भी लिखें कि गर्मी की छुट्टियाँ कैसी रहीं!

वर्ष 4 :: जून 1953 :: अङ्क 10

अच्छी सजा

किसी समय थी लड़की एक,
लड़की तो थी दिल की नेक;
मगर बड़ी वह थी शैतान,
करती थी सब की हैरान!

चीजें सब कर इधर-उधर
कर देती थी तितर-बितर;
कागज देती सभी बिखेर;
बड़ा मचाती थी अंधेर।

और इसी से वह लड़की
सहती थी सब की झिड़की;
यों ही घुड़की खाती थी;
फिर भी बाज न आती थी।

सूना पड़ा एक दिन घर;
कहीं गए थे सब बाहर।
लड़की ने सोचा—'मौका
[illegible] कभी न मिलने का।'

[illegible]ी वह दादा के
[illegible] पैठी चुपके:
[illegible]न पर पहचानी
चश्मा औ सुंघनी-दानी;

सोचा—'अरे वाह, क्या खूब!
अभी दिखाऊँ अपना रोब!'
चश्मा लगा बहुत उछली;
उसे मेज पर पटक चली,

फिर सुँघनी-दानी के हित;
कोशिश कर कर थकी बहुत।
पर उसको खोल न पाई;
लड़की बहुत बौखलाई।

घुसा दिया तब उस में नख,
जोर लगा अपना भर-सक
उठा लिया ढकना, फिर क्या?
सुँघनी का बादल उछला!

दृग से आँसू बह निकले,
जलते नथुने, ओंठ जले,
लगी तुरत वह चिल्लाने;
समझी सुँघनी के माने।

इतने में दादा आए;
दो थप्पड और लगाए।
लड़की समझी नादानी;
कभी न की फिर शैतानी।

बैरागी

मुख-चित्र

भारत के प्राचीन साहित्य में महा-भारत का एक अपूर्व स्थान है। उसे 'पञ्चम-वेद' कहा जाता है। सर्व-प्रथम भगवान वेदव्यास ने ही लोक-कल्याण की भावना से इस महान ग्रन्थ को लिखने का सङ्कल्प किया।

लेकिन महा-भारत लिखना तो कोई छोटी-मोटी बात नहीं थी! वह उनसे अकेले होने वाला काम नहीं था। एक लेखक की बड़ी ज़रूरत थी। इसलिए वे सोच में पड़ गए। अन्त में जब कुछ नहीं सूझा तो ब्रह्माजी का ध्यान किया। तुरन्त ब्रह्मा बाबा ने प्रत्यक्ष होकर कहा—'ऐसा दुष्कर कार्य तो एक गणेशजी ही कर सकते हैं। दूसरों से यह काम नहीं हो सकता। इसलिए, जाओ, गणेशजी की मदद माँगो।'

ब्रह्माजी की सलाह के अनुसार वेदव्यास ने गणेशजी के पास जाकर मदद माँगी। तब गणेशजी ने कहा—'भैया! मुझे तुम्हारी सहायता करने में कोई उज्र नहीं है। हाँ, एक बात जरूर है। जब मैं एक बार लिखना शुरू करता हूँ तो फिर रुकने का नाम नहीं लेता। इसलिए अगर तुम बिना रुकावट के लिखा सको तो मैं तुम्हारी मदद करने को तैयार हूँगा।'

अब बेचारे व्यासजी बड़ी मुश्किल में पड़ गए। आखिर उन्होंने सोच-विचार कर कहा—'अच्छा गणेशजी! मुझे आप की शर्त्त मंजूर है। लेकिन मेरी भी एक शर्त्त है! मैं जो कुछ बोलूँ उसका अर्थ समझ-बूझ कर ही आपको लिखना होगा।' व्यासजी की चतुरता देख कर गणेशजी मुसकुराने लगे। वे जानते थे कि महा-भारत से लोगों का कल्याण होगा। इसलिए व्यासजी की अजस्र कविता-धारा को लिपि-बद्ध करके चिर-काल तक सुरक्षित करने का भार उन्होंने सहर्ष उठा लिया।

इस तरह अठारह पर्व वाला महा-भारत व्यासजी द्वारा रचा गया। हिन्दुओं के लिए यह एक पुण्य-ग्रन्थ बन गया। वास्तव में महा-भारत पढ़ने से लोगों को अनेक लाभ होते हैं।

सोने की थाली

एक बार बोधिसत्व ने शेरी राज्य में कांसे-पीतल के बर्तनों के [illegible] के घर में जन्म लिया। वह पुराने [illegible] और नए बर्तन बेचता [illegible] लालची नहीं था। पराया [illegible] की कोशिश में नहीं रहता और जितना लाभ होता, उसी में संतोष कर लेता।

उसी राज्य में और एक लालची व्यापारी था। वह भी यही रोजगार करता था। वह बोधिसत्व का प्रतिद्वंद्वी था। कौड़ी-कौड़ी पर जान देता; बेईमानी करने में कभी नहीं हिचकिचाता था। वह बोधिसत्व को देख कर जलता था और जहाँ वह अपना माल बेचने जाता, वहीं वह भी पहुँच जाता।

एक बार इन दोनों ने 'तेलवाहा' नदी पार कर अंधापुर में प्रवेश किया। वहाँ जाकर दोनों ने सोचा कि बेकार की होड़ से कोई फायदा नहीं। इसलिए शहर को दो हिस्सों में बाँट लिया और तै किया कि कोई भी दूसरे के हिस्से में जाकर माल नहीं बेचे।

हाँ, उसी शहर में एक गरीब परिवार रहता था। किसी समय उस परिवार वाले बहुत अमीर थे। लेकिन तकदीर के फेर से वे अपना सारा धन गँवा बैठे थे। उस परिवार में अब बच रही थी एक बुढ़िया और उसकी पोती। दोनों बड़ी गरीबी में मुश्किल से अपने दिन काट रही थीं। एक एक कर पुराना माल-असबाब बेच खा रही थीं। इस तरह उनके घर की सभी वस्तुएँ बिक चुकी थीं। अब बच रही थी एक पुरानी थाली जिस में किसी समय उस घर का मालिक भोजन किया करता था। वह बहुत दिनों से घर के किसी कोने में पड़ी हुई थी। उस पर इतनी धूल जमी हुई

थी कि पहचानी भी न जा सकती थी। बेचारी बुढ़िया और उसकी पोती को मालूम नहीं था कि थाली किस धातु की बनी है।

बोधिसत्व का प्रतिद्वंद्वी लालची, व्यापारी उसी गली से जिस में वह बुढ़िया रहती थी गुजरा। वह हाँक लगाता जा रहा था—'बर्तन! बर्तन! हम बर्तन बेचते हैं, खरीदते हैं!'

उसकी हाँक सुन कर लड़की अपनी दादी के पास दौड़ी गई और बोली—'दादी! दादी! मुझे एक गिलास खरीद दो न पानी पीने के लिए!'

'पैसा कहाँ है चिटिया! तुम से तो हमारी हालत छिपी नहीं!' दादी ने करुणा भरे स्वर में कहा।

तब उस लड़की ने कोने में पड़ी हुई पुरानी थाली की बात याद दिलाई। तुरंत बुढ़िया ने लालची व्यापारी को बुलाया और थाली लेकर बदले में एक गिलास देने को कहा।

व्यापारी ने थाली को हाथ में लेकर देखा। उसने सुई से खरोंच कर जाँच लिया कि यह किस धातु की बनी है। उसे तुरंत मालूम हो गया कि वह सोने की है। बस, उसकी नीयत डोल गई। उसने वह थाली मुफ्त में ही किसी तरह हड़प लेनी चाही। इसलिए बुढ़िया से बोला—'दादी! कहाँ से उठा लाई यह पुरानी थाली! यह तो किसी काम की नहीं! इसे तो कोई मुफ्त में भी नहीं लेगा।' यह कह कर उसने थाली नीचे रख दी और तुरंत वहाँ से चला गया।

बराबर में शहर का वह मुहल्ला बोधिसत्व के हिस्से में आया था। इसलिए थोड़ी ही देर बाद वह दूसरी ओर से उस जगह आया। वह भी पहले व्यापारी की तरह हाँक लगाता आया। उसकी हाँक सुन कर लड़की फिर अपनी दादी के पास दौड़ी गई। बुढ़िया

बोली—'बेटी! तू नाहक हैरान हो रही है! अभी अभी तो वह व्यापारी कह गया था कि यह थाली किसी काम की नहीं!' उसने बिटिया को समझाया।

तब लड़की बोली—'नहीं दादी! यह व्यापारी बड़ा भला-मानुस मालूम होता है! कैसी मीठी बातें करता है! यह जरूर हमारी थाली ले लेगा!'

खैर, बुढ़िया ने बोधिसत्व को भी बुलाया। बोधिसत्व ने थाली को देखते ही सच्ची बात जान ली। वह बोला—'मैया! यह थाली सोने की है! हजार अशर्फियों से कम की न होगी। मैं इसे लेना तो चाहता हूँ, मगर अभी मेरे पास उतना पैसा नहीं है।'

तब बुढ़िया बोली—'बेटा! तुम्हारे आने के थोड़ी ही देर पहले एक आदमी आया था जो कहता था कि यह थाली किसी काम की नहीं। उसने इसे लेने से साफ़ इनकार कर दिया। अब तुम कहते हो, यह थाली सोने की है! शायद तुम्हारी भलमनसी से ही यह बदल गई है। इसलिए बेटा! पैसे का खयाल न करो! तुम्हारे पास जितना पैसा हो, उतना ही दे जाओ!'

उस समय बोधिसत्व के पास आठ सौ ही अशर्फियाँ थीं। हाँ, कुछ बर्तन जरूर थे। उसने वे बर्तन और अशर्फियाँ बुढ़िया को दीं और बोला—'मैया! अब मेरे पास कुछ भी नहीं है। हाँ, राह-खर्च के लिए आठ अशर्फियाँ रख ली हैं। क्योंकि उनके बिना मेरा काम नहीं चल सकता। बाकी जो कुछ मेरे पास था, तुम को दे दिया।' इस तरह बुढ़िया की इजाजत से वह थाली लेकर बोधिसत्व वहाँ से जल्दी जल्दी नदी के किनारे गया और नाव वाले को दो अशर्फियाँ देकर नाव पर चढ़ गया।

बोधिसत्व के जाते ही लालची व्यापारी दुबारा बुढ़िया के घर आया और बोला—'अच्छा बुढ़िया! वह थाली तो जरा इधर दे दे! और एक बार देख तो लूँ उसे! शायद कुछ काम आ जाय!'

'लेकिन भैया! अब वह थाली है कहाँ? तुम भी भले आदमी हो; सोने की थाली को कह गए—'किसी काम की नहीं।' और एक आदमी, शायद वह तुम्हारा साथी था, आया और हजार अशर्फियाँ देकर थाली खरीद ले गया।' बुढ़िया ने लालची व्यापारी से कहा।

इतना सुनते ही लालची व्यापारी के सारे बदन में आग लग गई। सोचने लगा—'इतने में यह अभागा कहाँ से टपक पड़ा! बेश-कीमती सोने की थाली उड़ा ले गया। हाय! मुझे कितना घाटा हुआ! पल भर में सर्वनाश हो गया।' यों सोच कर वह क्रोध से पगला गया। तराजू और बर्तनों की गठरी उसने वहीं फेंक दी और एक मोटा सा डण्डा लेकर नदी किनारे दौड़ा।

लेकिन तब तक बोधिसत्व की नाव मँझधार में पहुँच चुकी थी। 'ऐ नाव वाले! नाव फिरा लाओ! मैं तुम्हें मुँह-माँगा ईनाम दे दूँगा!' लालची व्यापारी जोर जोर से चिल्लाने लगा। लेकिन बोधिसत्व ने मना किया और नाव-वाला राजी न हुआ।

तब लाचार लालची व्यापारी उल-जलूल बकने और बोधिसत्व की निन्दा करने लगा। उसका सारा खून खौलने लगा। मुँह बन्दर की तरह लाल हो गया, छाती जोर जोर से धड़कने लगी। उसे बोधिसत्व पर इतना गुस्सा आया कि पागल की तरह नदी में कूद पड़ा और डूब कर मर गया।

विवेकी बोधिसत्व बहुत दिन तक जीवित रहा। दान-पुण्य करके उसने संसार में बहुत यश कमाया।

6

उसके बाद वही हुआ, जो महीपाल ने सोचा था। पड़ोस के एक टापू का राजा वसुपाल मंजुल-द्वीप पर चढ़ आया। दोनों दल वालों के बीच घमासान लड़ाई हुई। उस लड़ाई में तपोधन और महीपाल दोनों मारे गए। यह भयङ्कर समाचार सुनते ही महीपाल की पत्नी के प्राण-पखेरू उड़ गए। फिर तो वसुपाल ने खुशी-खुशी मंजुल-द्वीप पर कब्जा कर लिया। रत्न-मुकुट के लिए द्वीप का कोना-कोना छाना गया। उसके गुप्तचर घर-घर जाकर उसके बारे में पूछ-ताछ करने लगे। लेकिन कोई फ़ायदा न हुआ।

यों बहुत दिन बीत गए। आखिर जब एक दिन राजा वसुपाल जङ्गल में शिकार खेलने गया तो उसे एक पेड़ की डालों पर कोई चमकती हुई सी चीज़ दिखाई दी। जब नज़दीक जाकर देखा तो वही रत्न-मुकुट था।

लेकिन बेचारा उसे देख कर भी बेबस रह गया। क्योंकि एक भीषण महा-सर्प उस पेड़ के तने से लिपटा हुआ था। उस साँप की आँखें अंगारों की तरह चमक रही थीं। उस साँप के पंजे भी थे और उन पंजों के नख बघ-नखे की तरह नुकीले थे। पीठ का चमड़ा बहुत ही मज़बूत था और कछुए की पीठ से भी ज़्यादा कड़ा था। नथुनों से बारंबार आग की ज्वालाओं की सी लपटें निकल रही थीं।

उसे देख कर वसुपाल स्तंभित रह गया। वह उलटे पाँव लौट गया। महल को लौटते ही

सिपाहियों को हुक्म दिया—"अमुक जगह पर रत्न-मुकुट रखा हुआ है। फौरन जाकर उसे ले आओ!" तुरन्त सिपाही उस जगह दौड़े गए। लेकिन वहाँ जाते ही उनकी हिम्मत टूट गई। मगर राजा का हुक्म था; क्या करते? इसलिए एक एक कर उस साँप की आँखों की ज्वाला में परवानों की तरह जल मरे। एक भी लौट कर न आया।

तब राजा वसुपाल ने सारे राज में ढिंढोरा पिटवा दिया कि 'जो कोई उस साँप को मार कर रत्न-मुकुट ले आएगा, उसे मुँह-माँगा ईनाम मिलेगा।' यह ढिंढोरा सुन कर बहुत से लोगों के मुँह से लार टपकने लगी। लेकिन जो कोई ईनाम के लालच से गया, फिर लौट कर नहीं आया।

आखिर राजा वसुपाल निराश हो चला। उसने नामी-गिरामी ज्योतिषियों को बुला कर पूछा—'बताओ; रत्न-मुकुट पाने का क्या उपाय है?' ज्योतिषियों ने अनेक पोथी-पत्रे पलट कर कहा—'महाराज! रत्न-मुकुट तो राजा हर्षपाल के वंशजों को ही मिल सकता है। दूसरे उसे नहीं पा सकते।' फिर भी राजा वसुपाल के मन से रत्न-मुकुट पाने की आशा नहीं गई।

हाँ, बेटा! मैंने जिस महीपाल के बारे में बताया वही तुम्हारे काका हैं। वही तुम्हारे स्वप्नमें हर रोज आत्म-शान्ति की प्रार्थना करते हैं।' मित्रानंद ने कहा।

थोड़ी देर बाद वे फिर कहने लगे—'बेटा! चित्रभानु! जाओ! अपनी वीरता से रत्न-मुकुट ले आओ। इससे तुम्हारे काका की आत्मा को शान्ति तो पहुँचेगी ही। साथ ही तुम्हारे खानदान की इज्जत भी बच जाएगी। उधर तुम्हारे नाना अमरसिंह चिंता से घुल रहे होंगे। इसलिए जाओ, पहले उनका आशीर्वाद पा लो! इससे तुम्हारा भी भला होगा!'

यों मित्रानन्द का उपदेश पाकर कुमार चित्रभानु उसी दिन मगध-राज को चला।

* * *

पाठक पहले ही पढ़ चुके हैं कि उस दिन हर्षपाल को आग की लपटों से बचाने के बाद मन्दपाल अर्थपाल की पत्नी को बचाने के लिए वापस गया।

हाँ, तो इस तरह जान बच जाने के बाद हर्षपाल ने ज्यों ही देखा कि सब लोग इधर-उधर दौड़ रहे हैं और कोई उसकी ओर ध्यान नहीं दे रहा है तो वह चुपके से वहाँ से खिसक चला। उस गड़बड़ी में कोई उसे पहचान नहीं सका। इस तरह बन्दी-गृह से छुटकारा पाकर राजा हर्षपाल भूख-प्यास भी भुला कर मगध से भाग चला। राह में अमरसिंह के भेदियों ने उसे देख कर पहचान लिया और अपने स्वामी के पास ले गए। राजा हर्षपाल को देख कर अमरसिंह की खुशी का ठिकाना न रहा।

उसी समय कुमार चित्रभानु भी मगध-राज आ पहुँचा। उसे देख कर उसके दादा और नाना हर्ष से बावले हो गए। जब चित्रभानु ने बताया कि वह किस काम पर जा रहा है और वहाँ किस के कहने से आया है, तो दोनों ने उसकी बहुत सराहना की। लेकिन उन दोनों को उसका अकेले जाना पसन्द नहीं था। इसलिए उसके नाना अमरसिंह ने अपने बेटे विजयसिंह को भी उसके साथ कर दिया। ये दोनों वीर-कुमार बड़ों का आशीर्वाद पाकर एक शुभ-साइत में मंजुल-द्वीप की ओर चले।

* * *

अब सुनो, वहाँ कारागृह के पास क्या हुआ!

कुछ देर बाद राज-गुरु को जो शोकवश मूर्च्छित पड़ा हुआ था होश आया। लेकिन बेचारे की समझ में न आया कि ऐसी दुर्घटना कैसे हो गई! आखिर उसने इसे विधाता

का खेल समझ कर संतोष कर लिया। फिर भी वह दुष्ट अपनी कुचिंताओं से बाज नहीं आया। जब उसे पता लग गया कि मन्दपाल ने ही राजा हर्षपाल को बचाया था, तो वह उससे बदला लेने की चेष्टा में लग गया। हर्षपाल के गायब हो जाने से उसे थोड़ी-बहुत चिंता तो हुई। लेकिन आखिर सोचा—'यह बूढ़ा मेरा क्या बिगाड़ सकता है! इसके किए कुछ नहीं हो सकता।'

एक रात जब मन्दपाल बेखबर सो रहा था, राजगुरु ने चुपके से जाकर उसकी छाती में एक छुरा भोंक दिया। दूसरे दिन सारा इल्जाम निर्दोष पहरेदार के सिर थोप दिया और उसे फांसी दे डाली।

लेकिन लोगों के मन में शङ्का हो गई कि हो न हो, राजगुरु ने ही बूढ़े राजा हर्षपाल और मन्दपाल को मरवा डाला है। उधर राजगुरु के अत्याचार से घबरा कर सामन्तों ने मगध-राज अमरसिंह का आश्रय लिया। बूढ़े राजा हर्षपाल की सलाह के अनुसार वे सभी चलने लगे। राजा हर्षपाल ने खूब सोच-विचार कर निश्चय किया कि अब मल्हण-दुर्ग पर घेरा डालने और दुष्ट राज-गुरु के पापों का घड़ा फोड़ देने का समय आ गया है।

आखिर सभी सामन्तों की सेना एकत्र कर ली गई। रातों रात चल कर मल्हण-दुर्ग पर घेरा डाल दिया गया। राजगुरु ने एक प्रात उठ कर देखा तो सत्यानाश हो गया था। दुर्ग के निवासियों ने भी बगावत का झण्डा खड़ा कर दिया था। लाचार राजगुरु ने चाहा कि किले के चोर-दरवाजे से भाग चले। लेकिन बूढ़े हर्षपाल ने इस का भी प्रबन्ध कर रखा था। राजगुरु ज्यों ही दरवाजे से बाहर निकला कि मगध-राज के सैनिकों ने उसे गिरफ्तार कर लिया। राजगुरु के सिर पर बिजली टूट पड़ी।

किले पर राजा हर्षपाल ने कब्ज़ा कर लिया। लोगों की खुशी का ठिकाना न रहा। सामन्त लोग भी फूले न समाए। मल्लाण राज्य में फिर से पहले की सी शान्ति विराजने लगी। अब सब लोग चित्र-भानु और विजयसिंह के लौटने की राह देखने लगे।

* * *

उधर ये दोनों कुमार अनेक कष्ट उठा कर किसी तरह मंजुल-द्वीप आ पहुँचे। राजा वसुपाल ने उन दोनों की बहुत खातिर की। 'मैं तुम्हीं दोनों की राह देख रहा था।' उसने कहा। 'बड़ी खुशी की बात है कि रत्न-मुकुट का हकदार खुद ही उसे वापस ले जाने आया है।'

दूसरे दिन सब लोग तड़के उठे और उस जङ्गल में पहुँचे। उस पेड़ के तने से लिपटे हुए कराल व्याल के बारे में वसुपाल ने कुमार चित्र-भानु को पहले ही बता दिया था। उसने साफ़ साफ़ कह दिया था कि इस काम में जान का खतरा है। लेकिन चित्र-भानु ने इन बातों की कुछ भी परवाह न की। वह नङ्गी तलवार लेकर आगे बढ़ा और उस पेड़ के पास गया। वह महा-सर्प उसे देख फुफकारने लगा। चित्र-भानु ने आग की लपटों की परवाह न करके तलवार का वार

किया। आश्चर्य! तलवार की चोट खाते ही वह साँप एक सुन्दर गन्धर्व बन गया। उस गन्धर्व ने रत्न-मुकुट लेकर स्वयं चित्र-भानु के हाथों में रख दिया और बोला—'भाई! तुम ने मुझे शाप से छुटकारा दिला दिया। मेरी आत्मा को शान्ति मिल गई। लो, अपना रत्न-मुकुट! इसे तुम्हारे हाथ सौंप कर मैं निश्चिंत हो गया। अब मैं जाता हूँ।' यह कह कर वह गन्धर्व, जो वास्तव में महीपाल था, अदृश्य हो गया।

यह सब देख कर राजा वसुपाल को बहुत अचरज हुआ। रत्न-मुकुट की अपूर्व शोभा देख कर उसका मन विचलित हो

सोचा—'किसी न किसी तरह इसे हड़प लेना चाहिए।' उसने यह मनशा अपनी रानी से भी कह दी। उसकी बेटी जयमाला ने चुपके से सारी बातें सुन लीं। उसने सोचा—'किसी न किसी तरह इन दोनों अबोध राजकुमारों को बचाना चाहिए।' यह सोच कर उसने अपनी सखियों की सहायता से तीन घोड़ों को ले जाकर किले के फाटक पर बँधवा दिया। फिर उसने उन दोनों कुमारों के कमरे में जाकर सारा किस्सा सुना दिया और कहा—'फौरन यहाँ से भाग जाओ! नहीं तो जान नहीं बचेगी!' चित्रभानु [illegible] और हिचकिचाने लगे। यह देख कर जयमाला फिर बोली—'मेरा कहना मान लो। पिताजी तुम दोनों को मारने आते ही होंगे। मैंने अपने कानों सारी बात सुन ली। भला पिताजी जिन्होंने रत्न-मुकुट के लोभ से इस टापू पर चढ़ाई करके इसे जीता, तुम दोनों को उसे उठा ले जाते देख चुपचाप बैठे रहेंगे? कभी नहीं! मैंने तुम दोनों को उस महल में देखते ही सोचा—'इन सुन्दर राजकुमारों को नाहक मरने नहीं देना चाहिए।' मैं जानती हूँ कि पिताजी कितने लालची हैं। मेरी माँ भी उनसे कुछ कम नहीं। आज से मेरा उन दोनों से वास्ता न रहा। मैं भी तुम लोगों के साथ यहाँ से चल देने को तैयार हूँ। चलो! तीनों फौरन यहाँ से भाग चलें! देर न करो!' आखिर दोनों राजकुमारों ने उसकी बातों पर विश्वास कर लिया। तीनों भाग चले।

वसुपाल अपने निश्चय के अनुसार उन दोनों मूर्ख राजकुमारों को मारने जा ही रहा था कि एक नौकर ने दौड़ते हुए आकर कहा—'हुजूर! राजकुमारी गायब हो गई। सारा महल छान डाला। कहीं दिखाई नहीं देती।' यह सुन कर व्याकुल वसुपाल उलटे पाँव रनवास को लौट गया।

रनवास में जाते ही उसे खबर मिली कि राजकुमारी रत्न-मुकुट के लिए आए हुए दोनों राजकुमारों के साथ भाग रही हैं। तुरन्त वसुपाल ने घोड़े पर चढ़ कर उनका पीछा किया। बड़ी दूर तक पीछा करने के बाद उनसे पचास गज के फ़ासले तक पहुँच कर उसने चित्रभानु पर अपना छुरा फेंका। छुरा उसकी पीठ में चुभ गया। फिर भी वह नहीं रुका। आखिर पीछा करने वाले हार मान गए। तीनों साफ़ निकल गए। समुन्दर के किनारे पहुँच कर तीनों जहाज़ पर चढ़ गए और तुरन्त लंगर उठा लिया गया। जब तक वसुपाल और उसके सिपाही समुन्दर के किनारे पहुँचे, तब तक चिड़ियाँ निकल चुकी थीं। वे लाचार हो दाँत पीसते ही रह गए।

जहाज़ पर चढ़ कर राजकुमारी जयमाला ने चित्र-भानु की सेवा-सुश्रूषा की और दवा लगा कर घाव पर पट्टी बाँध दी। लेकिन कोई फायदा न हुआ। उसकी हालत बिगड़ती ही गई। क्योंकि छुरा ज़हर बुझा हुआ था। चित्र-भानु ने धीरज धरा और अपनी पीड़ा उन पर प्रगट न होने दी। आखिर किसी तरह तीनों मलाण जा पहुँचे।

रत्न-मुकुट लेकर इन तीनों के आने की खबर मलाण में तुरन्त चारों ओर फैल गई। स्वागत की तैयारियाँ होने लगीं। चित्रभानु ने उस अमूल्य मुकुट को ले जाकर सहर्ष राजा हर्षपाल के हाथों में रख दिया। बूढ़े हर्षपाल ने तुरन्त कुमार चित्र-भानु के राज-तिलक की तैयारी शुरू कर दी।

लेकिन अभागे युवराज के भाग्य में राज्य-पालन बदा न था। उसके जीवन की ज्योति पल-पल मद्धिम होती जा रही थी। आखिर राजा ने ऋषि मित्रानन्द के पास खबर भिजवा दी। लेकिन मित्रानन्द वहाँ नहीं थे। वे आश्रम बन्द कर चले गए थे।

राज-तिलक की साइत क्रमशः निकट आती गई। बेचारा चित्र-भानु अब चल-फिर भी न सकता था। उसके पलङ्ग के पास हमेशा वैद्यों और हकीमों का जमघट लगा रहता था। लेकिन विधि का लिखा कौन मेटा सकता है! बेचारा चित्र-भानु सब को निराश करके राज-तिलक के दो दिन पहले ही चल बसा। कल्याण राज में मातम छा गया।

बूढ़े हर्षपाल के हृदय में आग लग गई। उसकी आँखों से आँसुओं का ताँता बँध गया। यहाँ तक कि उसके निकट जाकर समझाने में भी लोगों को डर लगने लगा।

आफ़त का मारा हर्षपाल अपने कमरे में बैठा हुआ था। इतने में उसकी नज़र रत्न-मुकुट पर पड़ गई। उसे देखते ही उसका सारा बदन गुस्से से जलने लगा। उसने सोचा—'सारे आफ़त की जड़ यही है।' तुरन्त उसने उसे उठा कर ज़मीन पर दे मारा। अमूल्य रत्न-मुकुट टूक-टूक हो गया। हीरे-जवाहर और मणि-मरकत ज़मीन पर बिखर गए। राजा हर्षपाल बावले की तरह बकने लगा—'हाय! कितनी आशा लगा बैठा था कि चित्र-भानु यह मुकुट सिर पर धर कर सिंहासन पर बैठेगा और यह दृश्य देख कर यह जलती छाती जुड़ा लूँगा। अब क्या करूँ!'

दूसरे ही क्षण वह तैश में भर कर सिर के बाल नोचते हुए कहने लगा—'कहाँ गया वह दुष्ट, पापी राज-गुरु! आकर यह दृश्य देख ले और अपनी आँखें ठण्डी कर ले! कहाँ गया विश्वास-घाती मन्दपाल! मेरा सर्व-नाश देख कर क्यों नहीं हँसता!' इतना कहते कहते वह पागल की तरह दौड़ने लगा। इतने में उसका पैर उन चिकनी मणियों पर पड़ गया और वह फिसल कर चारों खाने चित हो गया। राजा हर्षपाल ने जवाहर बिछी फर्श पर गिर कर, फिर उठने का नाम तक न लिया।

[समाप्त]

किसी समय स्टेनमिज नाम का एक वैज्ञानिक रहता था। वह बड़ा ही पढ़ा लिखा और काबिल आदमी था। स्टेनमिज जिस देश का रहने वाला था उस में जाड़ा बहुत पड़ता था। जाड़े के दिनों में पानी भी जहाँ का तहाँ जम जाता और चारों ओर बरफ के सिवा कुछ न दिखाई देता।

इसलिए, जाड़े के दिनों में उस देश के सभी घरों में अँगीठियाँ जलती थीं। जाड़ा ऐसा कड़ा पड़ता था कि अँगीठी के बिना काम चलना मुश्किल था।

स्टेनमिज को भी सबेरे ही उठ कर अँगीठी सुलगानी पड़ती थी। इसलिए रात को ही वह इसका सारा इन्तजाम कर रखता था। उसे यह एक अचूक आदत सी पड़ गई थी।

हाँ, एक दिन वह सबेरे ही उठ कर दियासलाई हाथ में लेकर अँगीठी सुलगाने गया। सलाई जला कर अँगीठी सुलगाने के लिए आगे झुका। लेकिन अँगीठी में न जाने, क्या दिखाई पड़ा कि फूँक कर सलाई बुझा दी और चुपके वहाँ से उठ कर, चला गया।

उस दिन जाड़ा भी और दिनों से कड़ा पड़ रहा था। सरदी के मारे सारा बदन ऐंठा जाता था। सर्द मुल्कों के रहने वाले पैरों में मोजे और हाथों में दस्ताने पहनने के आदी होते हैं। ऊनी कोट वगैरह तो पहनते ही हैं।

स्टेनमिज भी ये सब पहने हुए था, फिर भी जाड़े के मारे सारा बदन थर-थर काँप रहा था। जाड़ा जैसे अन्दर से उमगा पड़ता था। उसने एक मोटे से कम्बल से सारा बदन ढँक लिया और कुर्सी पर बैठ कर लिखने-पढ़ने की कोशिश करने लगा। लेकिन जाड़े के मारे उँगलियाँ काँपने लगीं और अक्षर टेढ़े-मेढ़े लिखने लगा। देखने वाले को जरूर शक होता कि यह लिखावट उसी की है या किसी और की?

ऐसे समय स्टेनमिज का एक दोस्त उससे मिलने आया।

हमारे देश में जब कोई मेहमान आ जाता है तो हम उसे हाथ-पैर धोने के लिए पानी देते हैं और शरबत वगैरह देकर उसकी खातिर करते हैं।

लेकिन सर्द मुल्कों में जब बाहर से कोई मिलने आता है तो पहले अँगीठी की आग तेज़ करते हैं और उसे हाथ-पाँव सेंकने को कहते हैं। यह उन देशों के रहने वालों का रिवाज़ है। स्टेनमिज ने उस दिन अपने मित्र की ऐसी कोई खातिर नहीं की। आखिर जब लाचार होकर मित्र ने खुद ही अँगीठी की तरफ नज़र फेरी तो देखा कि आग बुझी हुई है।

उसे बहुत अचरज हुआ। उसने अपने मित्र से कहा—'क्यों भैया! बिना अँगीठी के ही सरदी दूर करने वाली किसी चीज़ का आविष्कार करना चाहते हो क्या? बताओ, आज अँगीठी क्यों नहीं सुलगाई? अरे भले-मानुस! क्यों इस तरह सिकुड़े बैठे हो?' उसने मज़ाक उड़ाया।

स्टेनमिज ने अपने मित्र की बात का जवाब देना चाहा। मगर सरदी के मारे शायद गला भी बैठ गया था। इसलिए उसके मुँह से कोई बात न निकली। 'अच्छा, मैं ही सुलगा लेता हूँ अँगीठी! दियासलाई कहाँ है?' मित्र ने कहा और उठ कर दियासलाई ढूँढने लगा।

लेकिन स्टेनमिज ने मित्र को मना किया। वह उसका हाथ पकड़ कर अँगीठी के पास ले गया और बोला—'देखो!' मित्र ने जब नीचे झुक कर अँगीठी में देखा तो चकित रह गया। पिछली रात की गरम राख की गुदगुदी सेज पर चूहे के कुछ नए जनमे बच्चे मज़े से लोटते-पोटते कुलबुला रहे थे। 'अच्छा! ये नन्हे मेहमान कब पधारे

तुम्हारे घर!' मित्र ने कहा। 'शायद पिछले रात को जब मैं बेखबर सो रहा था! सबेरे उठ कर अँगीठी सुलगाने गया तो पहले-पहल नज़र पड़ी इन पर!' स्टेनमिज ने मुस्कुरा कर जवाब दिया।

'अच्छा, यह बात है! इसीलिए अँगीठी सुलगाना छोड़ दिया और इस तरह जाड़े में थर-थर काँप रहे हो!' मित्र ने फिर सवाल किया।

'भला, इनके यहां रहते अँगीठी कैसे सुलगाता!' स्टेनमिज ने चूहे के बच्चों की तरफ़ देखते हुए जवाब दिया।

'वाह! इसमें क्या रखा था! इन्हें उठा कर दूसरी जगह रख देते और अँगीठी सुलगा लेते! इस छोटी सी बात के लिए इतनी तरद्दुद उठाने की क्या जरूरत थी!' मित्र ने कहा और चूहे के बच्चों को वहाँ से उठा कर दूसरी जगह रखने चला।

लेकिन स्टेनमिज ने तुरन्त मित्र को रोक कर कहा—'ठहरो! इन्हें हाथ न लगाना! सोचो, उस चूहे ने बच्चे यहीं क्यों दिए! इसलिए न कि राख की वजह से यह जगह गरम और मुलायम है! फिर इन नन्हे बच्चों को उठा कर दूसरी जगह रख देने से उन्हें कितनी तकलीफ होगी! उसकी माता का हृदय कितना दुखेगा! आखिर हमें इतनी उतावली करने की क्या जरूरत है! कुछ ही दिनों में जरूर ये बच्चे बड़े हो जाएंगे और अपनी राह चले जाएंगे! अभी जल्दी ही कौन सी आ पड़ी है!'

स्टेनमिज की ये बातें सुन कर उसका मित्र हक्का-बक्का सा रह गया। अपने मित्र की दयालुता का यह उदाहरण पाकर उसे बहुत आनन्द भी हुआ।

स्टेनमिज का हृदय इतना मृदुल था कि उसने जाड़े में ठिठुरना मंजूर किया; मगर उन चूहे के बच्चों को उठा कर दूसरी जगह रखना पसन्द न किया!

आँखें धोखा देती हैं!

जब हम कोई अनहोनी बात देखते हैं तो कहते हैं—'मैं अपनी आँखों पर आप ही विश्वास न कर सका।' मगर अपनी आँखों पर विश्वास नहीं करने वाले बहुत कम लोग होते हैं। विरले ही लोग जानते हैं कि आँखें धोखा भी दे सकती हैं!

वास्तव में अन्य सभी इन्द्रियों की तरह ही आँखें भी कभी-कभी धोखा खा जाती हैं। नीचे का चित्र देखिए—बाईं ओर एक आड़ी लकीर और उसकी बगल में एक × का चिह्न है। दाहनी ओर एक काला बिंदु है। अब अपनी बाईं आँख बन्द
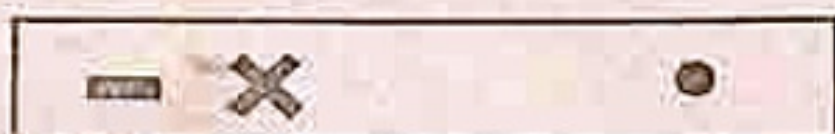
करके दाईं आँख से × के चिह्न को देखिए। इन चिह्नों को पहले थोड़ी दूर पर रखिए और क्रमशः आँखों के नज़दीक लेते जाइए। × के चिह्न की ओर देखने पर भी काला बिंदु आपको दिखाई देता रहेगा। आँखों से थोड़ी दूर एक जगह आने पर आप देखिएगा कि अब काला बिंदु ओझल हो गया है। लेकिन और भी नज़दीक ले जाने पर काला बिंदु फिर से दिखाई देने लगेगा।

२. बगल में दो वर्ग दिए गए हैं। एक सफ़ेद है, दूसरा काला। दोनों में कौन बड़ा है? ज्यादातर लोग बताएँगे कि सफ़ेद ही बड़ा है। लेकिन वास्तव में सफ़ेद वर्ग काले से छोटा है।

३. इन खड़ी और आड़ी लकीरों की कतारें देखिए। एक कतार को देखने से मालूम होता है, लम्बाई से ऊँचाई ज्यादा है। दूसरी कतार को देखने से मालूम होता है, ऊँचाई से लम्बाई ज्यादा है। लेकिन दोनों ठीक नहीं। क्योंकि वास्तव में दोनों कतारें चौरस हैं। अब बताइए तो, आँखें धोखा देती हैं कि नहीं?

किसी समय आनन्दनगर पर नित्यानन्द नाम का राजा शासन चलाया करता था। उसकी इकलौती लड़की का नाम ज्योतिर्मई था।

ज्योतिर्मई बड़ी सुन्दर थी। उन दिनों संसार में जितने राजकुमार थे, सभी मन ही मन उसे अपनी रानी बनाने की इच्छा रखते थे।

अन्त में यही एक विषम समस्या साबित हुई। कोई तय न कर सका कि उन सब राजकुमारों में से कौन सब से ज्यादा राजकुमारी का पति बनने योग्य है। ज्योतिर्मई के योग्य वर चुनने में राजा-मन्त्री आदि सबका माथा दुखने लगा। अन्त में राजकुमारी ने ही इस समस्या का हल खोज निकाला। उसने कहा—'मेरा भावी पति ऐसा हो जो सारे संसार को जीत सके। हमारा पड़ोसी राजा वज्रवदन संसार का सब से बड़ा वीर माना जाता है। इसलिए मेरा प्रण है कि जो वज्रवदन को जीतेगा वही मेरा पति बनेगा।'

राजकुमारी के इस निश्चय की खबर राजा को लगी। अपनी पुत्री की बुद्धिमत्ता देख कर वह विस्मित रह गया। उस का पड़ोसी वज्रवदन उसे बहुत कष्ट भी दे रहा था। बस, उसने सोचा—'एक पन्थ दो काज।' इसलिए तुरंत ढिंढोरा पिटवा दिया कि जो वीर तिमिर-द्वीप के राजा वज्रवदन को जीतेगा उसी को राजकुमारी मिलेगी।'

यह ढिंढोरा सुनते ही तिमिर-द्वीप को जाने वाले देश देश के वीर राजकुमारों का तांता सा बँध गया।

तिमिर-द्वीप एक छोटा सा राज था। उस द्वीप को समुन्दर की एक छोटी सी शाखा आनन्दनगर से अलग करती थी। उस द्वीप का राजा वज्रवदन बड़ा बलवान था। वह कभी दूसरे देशों पर चढ़ाई कर उन्हें जीतने की

रामानन्द मिश्र

इच्छा तो नहीं रखता था। मगर कोई दुश्मन उसके द्वीप में कदम रखता तो वह जिन्दा लौटने न पाता।

यह बात संसार के सभी राजकुमारों को मालूम थी। वे जानते थे कि वज्रवदन अजेय है। फिर भी ज्योतिर्मई से विवाह करने की आकांक्षा से वे प्राणों की आशा छोड़ कर आगे बढ़ रहे थे।

तिमिर-द्वीप के सामने ही इस पार एक छोटा सा घाट था। वहां से नावों पर सवार होकर वज्रवदन पर विजय पाने की अभिलाषा रखने वाले सभी एक एक कर उस पार तिमिर-द्वीप में जा उतरने लगे। वज्रवदन से पहले-पहल लड़ने का मौका कांचन-द्वीप के राजकुमार को मिला। इस पार हजारों लोग राजकुमार के लौटने की राह देख रहे थे। राजा नित्यानन्द और राजकुमारी ज्योतिर्मई एक जहाज पर चढ़ कर इन्तजार कर रहे थे। दो घण्टे भी बीतने न पाए थे कि कांचन-द्वीप का राजकुमार चीखता-चिल्लाता वापस आया। लोग पूछना ही चाहते थे कि क्या हुआ? इतने में राजकुमार चिल्ला उठा—'दुष्ट ने मेरे दाहिने हाथ की कनिष्ठा काट डाली! बुलाओ वैद्य-हकीम को! मेरी जान जा रही है।'

बस, सब को मालूम हो गया कि वज्रवदन अपने दुश्मनों की क्या गत बनाता है। ज्यों ही कांचन-द्वीप का राजकुमार वज्रवदन के पास गया कि उस वीर ने द्वन्द्व-युद्ध में उसे हरा दिया। अन्य राजकुमारों को भी चेताने के लिए उसने उसके दाहने हाथ की कनिष्ठा काट ली और जान से छोड़ दिया।

'भला हुआ कि उँगली ही काट ली! गरदन काट लेता तो जान ही चली जाती।' लोग कहने लगे और हँसने लगे। इस के बाद भी कई राजकुमार तिमिर-द्वीप गए। लेकिन सब ने वज्रवदन के हाथ हार खाई।

यहाँ तक कि धीरे धीरे सारे संसार में मशहूर हो गया कि वज्रवदन के पास राजकुमारों की कनिष्ठाओं का एक अच्छा खासा संग्रह है। दुनिया में जहाँ देखो वहाँ चार ही उँगलियों वाले राजकुमार थे। इन बेचारों का सब लोग मज़ाक उड़ाते थे।

यह हालत देख कर राजा नित्यानन्द बड़ी चिन्ता में पड़ गया। राजकुमारी ज्योतिर्मई भी बहुत परेशान हो गई। अब वज्रवदन से लोहा लेने के लिए कोई राजकुमार आगे न बढ़ता था। आनन्दनगर में मातम छा गया। ऐसी हालत में एक किसान का लड़का राजा के दर्शन करने आया। उसने राजा के सामने आकर कहा— 'हुजूर! मैं राजकुमार नहीं हूँ। एक किसान का लड़का हूँ। फिर भी वज्रवदन को जीतने का हौसला रखता हूँ। क्या उसे जीतने का मौका मुझे भी मिलेगा?'

राजा ने मन्त्री की तरफ देखा और फिर अपनी बेटी की तरफ देखा। दोनों का इशारा पाकर उसने कहा—'जो कोई वज्रवदन को जीतेगा उसे राजकुमारी मिलेगी।' राजा का आश्वासन पाकर किसान का लड़का वहाँ से चला गया।

यह बात संसार में हर कोई जानता था कि वज्रवदन जिस जिस को हरा देता है, उस उसकी कनिष्ठा काट कर छोड़ देता है। इस तरह वज्रवदन के हाथ हारे हुए हर राजकुमार के दाहने हाथ में चार ही उँगलियाँ होती थीं। इससे यह भी अपने आप साबित था कि जो कोई वज्रवदन से लड़ने के बाद भी पाँचों उँगलियाँ समूची लेकर वापस आए, वह उससे हारा नहीं; बल्कि उसी ने वज्रवदन को हराया होगा।

किसान का लड़का यह सब जानता था। फिर भी वह वज्रवदन को जीतने के लिए एक हँसुए के सिवा और कोई हथियार साथ

नहीं ले गया। राजा-मन्त्री और हज़ारों आदमी, जो उसे विदा करने आए थे, यह देख कर हैरान हो गए।

किसान का लड़का ज्योंही तिमिर-द्वीप पर उतरा, राजा वज्रवदन के पास खबर गई और वह उससे लड़ने आया। 'मैं इन बेवकूफ़ों पर तरस खाकर जान से छोड़ देता हूं। इससे इन दुष्टों का दुस्साहस और भी बढ़ता जा रहा है। इस बार इस बेवकूफ़ की उँगली नहीं, गरदन ही काट दूँगा। बस, सारा फ़िसाद मिट जायगा!' वज्रवदन ने क्रोध से सोचा और गरजने लगा।

तब किसान के लड़के ने नम्रता-पूर्वक सर झुका कर कहा—'देव! मैं आपसे लड़ने की धृष्टता नहीं कर सकता। मैं अभी अपनी हार कबूल कर लेता हूँ। लीजिए, मेरी छोटी उँगली काट लीजिए। मैं चुपके यहाँ से लौट जाता हूँ।' यह सुन कर वज्रवदन को बड़ा आश्चर्य हुआ। उसने सोचा—'लड़का तो समझदार मालूम होता है।' उसने दाहने हाथ की छोटी उँगली काट ली और उसे वापस लौटने दिया।

किसान के लड़के को इससे बिलकुल अफ़सोस नहीं हुआ। उलटे उसे बहुत खुशी हुई। वह नाव पर चढ़ कर वापस चला। पार उतरते ही अपना हँसुआ उठा कर, खुशी से चिल्लाया—'वज्रवदन हार गया! मेरे दाहने हाथ की उँगलियाँ देख लो!' लोग आँखें फाड़-फाड़ कर देखने लगे। किसान के लड़के के दाहने हाथ की पाँचों उँगलियाँ सुरक्षित थीं! तुरन्त सब लोग 'विश्व-विजयी वीर की जय हो!' कह कर चिल्लाने लगे। राजकुमारी ज्योतिर्मई ने किसान के लड़के के गले में जयमाला डाल दी। चारों ओर मङ्गल-वाद्य बजने लगे।

हाँ, किसी को यह मालूम न हो सका कि किसान के लड़के के दाहने हाथ में पहले ही से छः उँगलियाँ थीं।

किसी समय एक राजा रहता था। बहुत दिन तक निस्संतान रहने के बाद उस के एक लड़की पैदा हुई। वह बड़ी सुन्दरी थी। ज्यों ज्यों वह बड़ी होती गई, त्यों त्यों उसकी सुन्दरता भी बढ़ती गई।

लेकिन उसकी दिन दिन बढ़ती हुई सुन्दरता देख कर राजा को खुशी के बदले अफ़सोस होने लगा। बात यह थी कि राजकुमारी किसी भी शिरोचित कला-कौशल में रुचि नहीं दिखाती थी। पिता के बाद वही गद्दी पर बैठने वाली थी; फिर भी वह राजोचित मर्यादा का पालन नहीं करती थी।

जिस दिन से उसने चलना सीखा उस दिन से उसे दौड़ने का एक चसका सा लग गया था। उसने बस, प्रण सा कर लिया था कि चाहे मनुष्य हों या पशु-पक्षी, कोई उससे ज्यादा तेज न दौड़ सके। दूरी पर कोई घोड़ा दौड़ता दिखाई देता तो वह उसका पीछा करने लगती और उससे आगे निकल कर ही दम लेती। जङ्गल में जाती तो जङ्गली जानवरों से होड़ करने लगती। प्रमोद-वन में जाने पर हरिण आदि ही से बाजी लगाने लगती। यों बहुत दूर तक और बहुत देर तक दौड़ने पर भी वह कभी थकने का नाम न लेती। यह देख कर लोगों को बहुत अचरज होता। 'वायुदेव के अलावा दूसरा कोई हमारी राजकुमारी से दौड़ने में टक्कर नहीं ले सकता।' लोग कहते। यों धीरे धीरे उस राजकुमारी का नाम ही 'मारुती' पड़ गया।

राज के सभी लोगों ने राजकुमारी की दौड़ने की यह लत छुड़ाने की कोशिश की। रनवास की औरतों ने भी उसे बहुत कुछ समझाया। प्रधान मन्त्री और पुरोहित ने अनेकों बार राज-वंश की स्त्रियों की मर्यादा के बारे में लम्बे व्याख्यान झाड़े। उन्होंने

कहा—'तुम्हारे पिताजी बूढ़े हो गए हैं। राज-काज का बोझ वे और ज्यादा दिन तक नहीं सम्हाल सकते। कोई नहीं कह सकता कब यह बोझ तुम्हारे सिर टूट पड़े।

राज-मुकुट के प्रति प्रजा का आदर और अनुराग अक्षुण्ण होना चाहिए। नहीं तो राज्य-भार सम्हालना असंभव हो जायगा। घोड़ों और हरिणों से दौड़ने में बाजी लगा कर जीतने मात्र से प्रजा किसीका सम्मान नहीं करेगी। क्योंकि राज-काज सम्हालने के लिए दौड़ना कोई अनिवार्य गुण नहीं है। उसके लिए तो बुद्धि की कुशलता और दूर की सूझ चाहिए। अब भी अगर राज-काज की ओर तुम्हारा ध्यान नहीं जायगा तो आगे बड़ी मुश्किल पड़ जाएगी।'

मन्त्री और राज-पुरोहित के इस तरह समझाने की और भी एक वजह थी। वह यह थी कि राजकुमारी मालती सयानी हो गई थी। उसका विवाह और ज्यादा दिन तक टाला नहीं जा सकता था। राज-तिलक टाला जा सकता था; मगर विवाह टालने में कई अड़चनें थीं। मालती अड़ोस-पड़ोस के राजकुमारों में किसी को चुन लेती तो बाकी सारा काम मंत्री और पुरोहितजी सम्हाल लेते। लेकिन एक बात ज़रूर थी; जब तक मालती अपना रङ्ग-ढङ्ग नहीं बदलती तब तक कोई भी राजकुमार उससे ब्याह करने को राजी नहीं होता।

मंत्री और पुरोहित की बातें मालती ने ध्यान से सुनीं। अन्त में उसने कहा—'अच्छा, मैं विवाह करने को राजी हूँ। लेकिन मुझे आपके चुने हुए राजकुमार नहीं चाहिए। मैं विवाह तो उसी से करूँगी जो दौड़ने में मुझे हरा सकेगा। जो मुझ से ज्यादा तेज नहीं दौड़ सकता, वह मेरा पति बनने लायक नहीं।'

राजकुमारी की यह दलील सुन कर मन्त्री हक्का-बक्का सा रह गया। पुरोहितजी के मुँह से कोई बात न निकली।

'अच्छा, बेटी! तुम्हारे इच्छानुसार ही सब कुछ होगा। मैं अभी आस-पड़ोस के सभी देशों में खबर भिजवाता हूँ।' मन्त्री ने कहा। 'हाँ, और भी एक शर्त है। मैं राज-वंश की मर्यादा भङ्ग नहीं करना चाहती। मैं यह नहीं चाहती कि हर ऐरे-गैरे नत्थू-खैरे को मुझसे होड़ करने का मौका मिले। इसलिए शर्त यह हो कि जो मुझसे दौड़ने में हार जाए, वह जान से हाथ धो बैठे। यह भी सब लोगों को सूचित कर दीजिएगा।' मारुती बोली। 'जो आज्ञा!' मन्त्री ने कहा।

* * *

मारुती के स्वयम्वर की विचित्र शर्त सुन कर सब देशों के लोग हैरान हो गए। क्योंकि ऐसा दृष्टांत किसी ने पुराण और इतिहास में भी नहीं पढ़ा था। लोगों ने अनेक प्रकार के स्वयम्वरों के बारे में सुना था। मगर दौड़ने की बाजी लगा कर पति को चुनने का हाल आज तक किसीने नहीं सुना था।

एक बात और थी— स्वयम्वर में भाग लेने वाले आपस में ही होड़ कर करते थे। भावी वधू से होड़ करने की बात तो बिलकुल अपूर्व थी।

मारुती की सुन्दरता सारे संसार में मशहूर थी। इसी कारण से कुछ साहसी इस होड़ में भाग लेने आए। मारुती इकलौती बेटी थी। इसलिए राज्य-लोभ से और कुछ लोगों ने साहस किया।

'एक स्त्री हमें दौड़ने में चुनौती दे और हम चुप रह जाएं!' कुछ राजकुमारों ने सोचा और आगे बढ़े। और कुछ लोग दौड़ने

के शौकीन थे। ऐसे लोग भी प्राणों की परवाह न करके मारुती को जीतने चले। कुछ लोग दौड़ना सीखने लगे।

इस तरह अनेक देशों से तरह तरह के उम्मीदवार आए। इनमें कुछ सुप्रसिद्ध व्यक्ति थे, कुछ सुन्दर थे, कुछ बुद्धिमान थे और कुछ ऊँचे-घरानों वाले थे। लेकिन ऐसे लोग बहुत कम थे, जो सचमुच दौड़ सकते थे। इधर मारुती तो आठों पहर दौड़ने के फिराक में रहती थी। दौड़ने का उसे चसका था।

राजमहल के सामने एक बड़े मैदान में इस दौड़ की तैयारी की गई। दोनों ओर दर्शकों के खड़े रहने के लिए इन्तज़ाम किया गया। दौड़ में भाग लेकर हारने वालों के लिए एक बलिमंच भी खड़ा कर दिया गया। जो कोई राजकुमारी से हार जाता, उस को पकड़ कर सीधे बलिमंच पर ले जाया जाता।

पहले दिन बारह उम्मीदवार उस बलिमंच पर दुर्मरण को प्राप्त हुए। देखने वालों के दिल दहल गए। लोग मारुती को भला-बुरा कहने लगे। कुछ लोगों ने कहा—'उसका पत्थर का दिल है।' और कुछ लोगों ने कहा—'इस में उसका तो कोई दोष नहीं; दोष तो उससे दौड़ने की धृष्टता करने वालों का है।' कुछ लोगों ने कहा—'यह दौड़ तुरंत बन्द कर देनी चाहिए। क्योंकि होनहार राजकुमारों की जान नाहक जा रही है।' और कुछ लोगों के मत में मारुती का ब्याह कभी नहीं होने वाला था। इसलिए कि उसे दौड़ने में हराना नामुमकिन था।

मारुती से विवाह करने की इच्छा रखने वाले हर रोज आते ही रहे। यज्ञ के पशुओं की तरह बलिमंच पर रोज अनेकों शीस लोटते ही रहे। यह हत्याकाण्ड रोकने की कोई सूरत नज़र न आई।

इस तरह मारुती से विवाह करने के लिए आए हुए लोगों में कुमार नाम का एक नौजवान भी था। वह था तो राजकुमार ही; मगर बचपन में ही माँ-बाप मर गए थे और दुश्मनों ने उसके राज पर कब्ज़ा करके उसे मार भगा दिया था। तब से बेचारा न जाने कहाँ, कहाँ, भटकता फिर रहा था। इस देश में संयोगवश कदम रखते ही कुमार ने इस विचित्र स्वयंवर के बारे में पहले-पहल सुना। एक रोज़ वह भी उस होड़ के मैदान में आया।

वहाँ आकर ज्यों ही मारुती पर नज़र पड़ी, बेचारा कुमार सारा संसार भुला बैठा। उसे यह भी याद न रहा कि वह कौन है और यहाँ क्या कर रहा है!

मारुती ने एक अभागे को हराया। बेचारे को तुरंत पकड़ कर बलिमंच पर ले जाया गया। लोगों के आर्तनाद से आसमान गूंज उठा। लेकिन बेचारे कुमार को मारुती के सिवा और किसी चीज़ का ध्यान न था। लोगों का आर्तनाद भी उसे सुनाई न दिया। वह एक-टक मारुती की ओर देखता रहा।

धीरे धीरे सब लोग वहाँ से चले गए। कुमार भी वहाँ से चल पड़ा। लेकिन उसे यह भी ख्याल न था कि कहाँ जा रहा है। वह सीधे नगर के बाहर चला गया और नदी के किनारे से चल कर एक उजाड़ मन्दिर के नज़दीक जा पहुँचा। अंदर जाने पर उसने देखा कि वह देवी पार्वती का एक पुराना मन्दिर है।

मन्दिर सूना था। जगह जगह दीवारों की दरारों में अजीब पेड़-पौधे उग आए थे। मालूम होता था, बरसों से कोई उधर नहीं आया है। कीड़े-मकोड़े और छोटे-छोटे जीव-जन्तु वहाँ मज़े में सैर-सपाटा कर रहे थे।

देवी पार्वती की मूर्ति को देखते ही कुमार के हृदय से भावनाओं का स्रोत उमड़ पड़ा।

मां, मारुती बिल्कुल अबोध है। वह नहीं जानती कि दुनियाँ में कौन सी चीज़ चाहने योग्य है। नहीं तो वह इस तरह का स्वयम्वर नहीं रचाती। माँ, किसी तरह उसके हृदय में वह ज्वाला सुलगा दो जिससे वह भी जीवन का अर्थ समझ जाए। तुम्हारे सिवा संसार में मेरा कौन है? जब तक तुम मुझ पर कृपा नहीं करोगी, मैं तुम्हारे पैर नहीं छोड़ूँगा। मृत्यु मनुष्य-मात्र के लिए दुर्निवार है। मैं जानता हूँ कि मैं ज्यादा दिन नहीं जीऊँगा। तुम मुझ पर कृपा नहीं करोगी तो मैं यहीं, तुम्हारे पैरों के नज़दीक ही जान दे दूँगा।'

वह घुटनों के बल देवी के पैरों के पास बैठ गया और कहने लगा—'माँ! भवानी! तुम मेरी कुल-देवी हो। तुम जानती हो, मेरी जिन्दगी कितने दुःखों में से गुज़र चुकी है। फिर भी मैंने कभी तुमसे कुछ नहीं माँगा। सारे कष्ट धीरज के साथ सहता गया। लेकिन अब यह नई पीड़ा नहीं सही जाती। कृपा करो; किसी तरह मारुती को मुझे दिला दो। मैं राज-पाट नहीं चाहता। ऐशो-आराम नहीं चाहता। मैं मारुती को चाहता हूँ। उसके अलावा मुझे इस संसार में और कुछ नहीं चाहिए। तुम्हारे चरणों की कसम खाकर कहता हूँ।

* * *

तीन दिन और तीन रात तक बेचारा कुमार दाना-पानी और नींद-आराम भुला कर देवी पार्वती के पैरों के पास धरना देकर बैठा रहा। तीसरी रात का तीसरा पहर भी बीतने को आया। दूर कहीं मुर्गा बाँग देने लगा। अँधेरा, उजाड़ मन्दिर सहसा एक अपूर्व प्रकाश से जगमगा उठा। कुमार ने चकित होकर सर उठा कर देखा। लेकिन उसे वहाँ एक दुर्निरीक्ष्य तेजोराशि के अतिरिक्त कुछ न दिखाई दिया। हाँ, ये शब्द उसके कानों में गूँजने लगे—'बेटा, सोच न करो।

तुम्हारी इच्छा पूरी होगी। तुम बल-प्रयोग से मारुती को नहीं पा सकते। बुद्धि-बल के प्रयोग से ही उसको जीत सकोगे। मैं तुम्हें तीन सोने के नींबू देती हूँ। जब तुम मारुती के साथ दौड़ते हुए पिछड़ जाओ तो एक नींबू पीछे फेंक देना। यों ज़रूरत पड़ने पर तीनों नींबुओं का इस्तेमाल करना। तुम्हारी इच्छा पूरी हो जायगी।'

पल भर में सारा तेज अदृश्य हो गया। कुमार को ऐसा लगा जैसे कोई अपने ठण्डे हाथ से उसका माथा सहला रहा है। तुरंत उसके मन की सारे वेदना, देह की सारी थकान दूर हो गई। वहाँ से उठ खड़ा हुआ तो देखा कि हाथ में तीन सोने के नींबू चमक रहे हैं। उन्हें माथे से छुला कर वह मन्दिर से बाहर आया और नदी में नहा कर शहर की ओर चला।

स्वयम्बर के मैदान में पहुँचते पहुँचते सवेरा हो गया। लोग जमा हो रहे थे। मारुती होड़ के लिए तैयार खड़ी अपने प्रतिद्वन्दियों की राह देख रही थी। कुमार अच्छी तरह जानता था कि उसकी छाती पत्थर की है। फिर भी वह उस पत्थर को पिघलाना चाहता था। उसे देवी पार्वती का पूरा भरोसा था।

होड़ का सारा इन्तज़ाम हो गया। कुमार जाकर सीधे राजकुमारी मारुती की बगल में खड़ा हो गया। दोनों 'एक, दो, तीन' सुनने का इन्तज़ार करने लगे। दूसरे ही क्षण दोनों दौड़ने लगे और शुरू ही में कुमार पिछड़ने लगा। तुरन्त उसने एक सोने का नींबू निकाल कर पीछे फेंक दिया। सुनहरी धूप में जगमगाता हुआ वह नींबू वेग से पीछे लुड़कने लगा।

उस नींबू को देख कर मारुती की आँखें लालच से चमकने लगीं। वायु-वेग से लुड़कता हुआ वह नींबू मानों उसी को चुनौती दे रहा था। वह पीछे मुड़ी, वेग से

दौड़ कर उस नींबू को उठा लिया और फिर कुमार की ओर दौड़ी। कुमार तब तक थोड़ा आगे निकल गया था।

लेकिन मारुती के लिए उसके पास पहुँच जाना कोई बड़ी बात नहीं थी। वह वेग से दौड़ कर पल में उसके पास पहुँच गई। आगे निकल ही जाना चाहती थी कि कुमार ने अपनी जेब से दूसरा नींबू निकाला और पीछे फेंक दिया। इस बार भी मारुती अपना लोभ संवरण न कर सकी। वह पीछे मुड़ी और उस नींबू को उठाने दौड़ी। जब तक वह नींबू लेकर कुमार की तरफ़ दौड़ी तब तक कुमार बहुत दूर निकल गया था।

फिर भी मारुती के पैरों में जैसे पर लग गए थे। वह तूफान की तरह दौड़ने लगी और कुछ ही देर में कुमार के पास जा पहुँची। आगे बढ़ने ही को थी कि कुमार ने अपनी जेब से तीसरा नींबू निकाला और बदन की सारी ताकत लगा कर पीछे की ओर फेंक दिया।

मारुती रुक गई। उसकी नज़र पल भर कुमार पर ठहरी, जो थकान के मारे हाँफते-रुकते चला जा रहा था। दूसरे ही क्षण उसने नींबू को देखा जो विद्युत्-वेग से लुढ़कता ओझल होता जा रहा था। बस, वह पीछे मुड़ी और नींबू की ओर दौड़ी। जब तक उसने दौड़ कर नींबू उठा लिया और पीछे मुड़ी तब तक कुमार बहुत आगे निकल गया। लक्ष्य भी ज्यादा दूर न था। बेचारी मारुती हवा से बातें करती हुई दौड़ने लगी। लेकिन वह कुमार के पास पहुँच न सकी। कुमार उस से पहले ही लक्ष्य पर पहुँच गया था।

लोगों के हर्षनाद और जय-जय कार से आसमान गूंजने लगा। मन्त्री और पुरोहित दौड़ गए और वर-माला ले आए। मारुती ने काँपते हुए हाथों से माला कुमार के गले में डाल दी। लाज से उसका सर झुक गया। मारुती में यह प्रथम स्त्रियोचित लक्षण देख कर राज-परिवार फूला न समाया।

नौ की करामात

सब अंकों में 'नौ' बड़ा ही अजीब है। इस अंक से कई तरह के तमाशे किए जा सकते हैं। अच्छा, पहले ज़रा देखें, नौ अंक क्या क्या करिश्मे कर दिखाता है।

$9 \times 1 = 9$
$9 \times 2 = 18$
$9 \times 3 = 27$
$9 \times 4 = 36$
$9 \times 5 = 45$

9×6 कितना हुआ, इस सवाल जवाब हम यों ही बता सकते हैं। $9 \times 5 = 45$ हुआ न ! इन दोनों अंकों को उलट कर देखो ! इस तरह पहली संख्या एक एक कर बढ़ती जायगी और दूसरी संख्या घटती जाएगी। नीचे देखो :—

$9 \times 6 = 54$
$9 \times 7 = 63$
$9 \times 8 = 72$
$9 \times 9 = 81$

और एक खासियत यह है कि नौ को गुना करके गुणन-फल की दोनों संख्याओं को जोड़ने पर फिर नौ ही होगा। उदाहरण देखो :—

$9 \times 2 = 18$ .... $1 + 8 = 9$
$9 \times 3 = 27$ .... $2 + 7 = 9$
$9 \times 4 = 36$ .... $3 + 6 = 9$
$9 \times 5 = 45$ .... $4 + 5 = 9$

इसी तरह अन्य संख्याएँ भी।

जोड़ने में भी नौ अंक कई तमाशे करता है। नौ से जब कोई संख्या जोड़ी जाती है तो जो संख्या आती है उसको जोड़ने पर पहले नौ से जुटी हुई संख्या ही आती है। नौ अपने स्थान पर वैसे ही रह जाता है। उदाहरण देखो :—

$9 + 2 = 11$ .... $1 + 1 = 2$
$9 + 3 = 12$ .... $1 + 2 = 3$
$9 + 4 = 13$ .... $1 + 3 = 4$
$9 + 5 = 14$ .... $1 + 4 = 5$
$9 + 6 = 15$ .... $1 + 5 = 6$
$9 + 7 = 16$ .... $1 + 6 = 7$
$9 + 8 = 17$ .... $1 + 7 = 8$
$9 + 9 = 18$ .... $1 + 8 = 9$

इसके अलावा नौ की करामात के बारे में तुम जो कुछ जानते हो, लिख भेजो।

पुराने ज़माने में कांचीपुर राज्य पर कनकसेन नाम का राजा शासन किया करता था। राजा कनकसेन बड़ा ही शौकीन आदमी था। उसने दूर दूर के देशों से तरह तरह के फूल-पौधे मँगवाए और राजमहल के पिछवाड़े में एक सुन्दर उपवन लगवाया।

उस उपवन में उसने एक सरोवर भी खुदवाया। सरोवर के चारों ओर बड़े बड़े पेड़ लगवाए और मनोहर लतामण्डप रचाए।

एक दिन कांचीपुर की रानी उस सरोवर में नहाने गई। पानी में घुसने के पहले रानी ने अपने बहु-मूल्य आभरण उतार कर एक दासी को रखने के लिए दिये। उन आभरणों में एक अमूल्य 'रत्नहार' भी था।

दासी ने एक बार चारों तरफ़ नज़र दौड़ाई और वहां किसी को न देख कर गहने ज़मीन पर रख दिए। फिर वह जाकर चुपके से फूल बीनने लगी। इतने में एक बन्दरी, जो वहां पेड़ों पर रहती थी नीचे कूद पड़ी और रत्नहार चुरा कर एक ही छलांग में फिर पेड़ पर चढ़ गई।

बन्दरी का हार उठा ले जाना दासी ने देख तो लिया। लेकिन बेचारी कुछ न कर सकती थी। चिल्लाने पर उसी की जान पर आ बनती। इसलिए चुप रह गई। रानी जब नहा-धोकर किनारे आई और कपड़े [illegible] लगीं तो हार गायब देख कर दासी से पूछने लगीं। 'मैं क्या जानूं। आपने जो जो गहने मुझे रखने को दिए, वे सभी यहीं रखे हैं।' दासी ने कहा।

रानी ने लौट कर तुरंत राजा से शिकायत की। राजा ने मन्त्री को बुलाया और हुक्म दिया कि 'सांझ होने के पहले चोर पकड़ा नहीं गया तो तुम्हारी ख़ैर नहीं!'

राजाज्ञा के अनुसार मन्त्री ने सेनापति को बुलाया और सारा हाल सुना कर कहा—

सुन्दरलाल

'साँझ होने के पहले ही चोर को पकड़ कर रत्नहार ले आओ! नहीं तो नाहक नौकरी से हाथ धो बैठोगे।'

तुरंत सेनापति सैकड़ों सिपाहियों के साथ रत्नहार की खोज करने निकला। सारा शहर छान मारा। लेकिन कोई फायदा न हुआ। इन सब लोगों का ख्याल था कि चोर जरूर गरीब होगा; इसलिए फटे-चिटे गन्दे कपड़े पहने होगा और दुबला-पतला होगा। आखिर साँझ तक भटक भटक कर सेनापति ने एक गरीब, दुबले-पतले आदमी को पकड़ लिया और राजा के सामने लाकर पेश किया। चोर के पकड़े जाने की खबर सुन कर सब लोगों को खुशी हुई।

'तूने रत्नहार कहाँ छिपा रखा है?' राजा ने उस आदमी से गरज कर पूछा।

उस गरीब आदमी को मालूम था कि अपने को बेकसूर बताने पर कोई उसका विश्वास नहीं करेगा और उसे तत्क्षण फाँसी दे दी जायगी। इसलिए उसने डर से काँपते हुए कहा—'हुजूर! मैंने वह रत्नहार खजांचीजी को दे दिया है।' तुरन्त खजांची को पकड़ कर वहाँ लाया गया। राजा ने उनसे भी वही सवाल किया। खजांची भी बुद्धू नहीं थे। वे राजा का मन अच्छी तरह जानते थे। इसलिए बेखटके बोले—'हुजूर! मैंने तो वह रत्नहार राज-ज्योतिषीजी को दे दिया है।' हथकड़ी-बेड़ी लगा कर राज-ज्योतिषीजी को राजा के सामने पेश किया गया। राजा ने उनसे भी वही पुराना सवाल किया। ज्योतिषीजी ने निस्संकोच जवाब दिया—'हुजूर! मैंने वह रत्नहार मन्त्रीजी के बड़े लड़के को दिया है।' तुरन्त फरमान हुआ कि 'जाओ, मन्त्रीजी के बड़े लड़के को पकड़ लाओ!' उसे तुरन्त पकड़ लाया गया। लेकिन तब तक रात बहुत हो गई थी।

इसलिए राजा ने कहा—'अभियुक्तों को कैद कर जेल में बन्द कर दो! कल सबेरे हम फिर इन्साफ़ करेंगे।' इतना कह कर राजा उठ गए। अभियुक्तों को ले जाकर जेल में बन्द कर दिया गया।
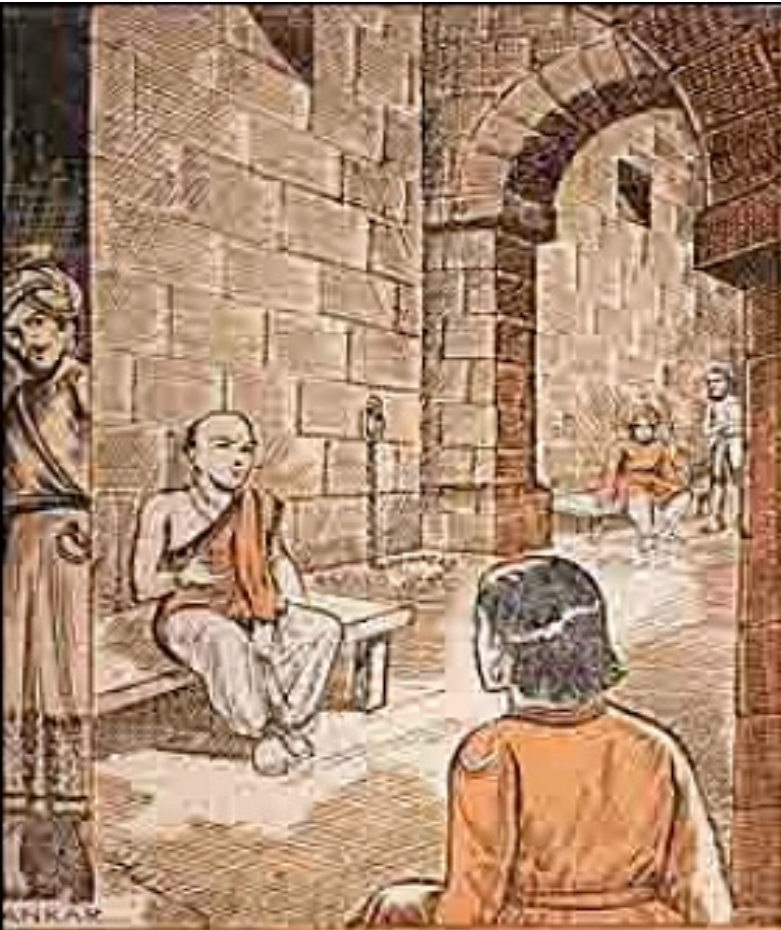
उस रात बेचारे मन्त्री की नींद हराम हो गई। रत्नहार तो गया ही। साथ ही चोरी का इल्ज़ाम उस गरीब से जो शुरू हुआ तो सीधे अन्त में उन्हीं के लड़के के सिर मढ़ दिया गया। उन्होंने सोचा—'इस मामले में ज़रूर कोई न कोई गड़बड़ी है।' इसलिए आधी रात के वक्त उठ कर वे सीधे जेल में गए और अभियुक्तों की कोठरी की दीवार से कान लगा कर सुनने लगे।

पहले तो उस कोठरी में से किसी के रोने की आवाज़ आई। थोड़ी देर बाद रोना रुक गया। उस गरीब की आवाज़ ने कहा—'खजांचीजी! माफ़ कीजिएगा! जान की खौफ़ से मैं सफेद झूठ बोल गया। वास्तव में मैं इस रत्नहार के बारे में कुछ नहीं जानता।'

फिर खजांची की आवाज़ बोलने लगी—'ज्योतिषीजी महराज! क्षमा कीजिएगा। मैंने झूठा दोष आपके सिर थोप दिया। इसकी वजह खौफ़ के अलावा और कुछ नहीं थी!'

तब ज्योतिषीजी बोले—'अरे भाई! मैं क्या दूध का धुला हूँ! मैंने सारा दोष प्रधान मन्त्री के लड़के के सिर थोप दिया और अपनी बला टाल ली।'

मन्त्री ने जो खड़ा खड़ा सारी बातें सुन रहा था, भेद जान लिया। वह वहां से सीधे राजा के पास चला गया और उसे नींद से जगा कर, जो कुछ सुना था, सब कह दिया। मन्त्री का बयान सुन कर राजा

ने एक लम्बी साँस छोड़ी। फिर वह रत्नहार चुराया किसने! पौ फटने तक राजा यही सोचता बैठा रहा।

सवेरा हुआ। तुरन्त राजा ने उस दासी को, जिसे रानी ने रत्नहार रखने को दिया था, बुलाया और धमकाया—'बोल! रत्नहार किसने लिया? सच सच बता, नहीं तो तेरी बोटी बोटी उड़ा दूँगा।'

दासी घबरा गई। बोली—'महाराज! मेरा कोई कसूर नहीं! मैं ठीक ठीक तो नहीं बता सकती कि रत्नहार किसने चुराया। हाँ, उपवन के पेड़ों पर रहने वाली एक बन्दरी पर मुझे शक होता है!'

'उस बन्दरी पर तुम्हें क्यों शक होता है! क्या वह तुम से ज्यादा सुन्दर है?' राजा लाल-पीली आँखें करके बोला।

'नहीं हुजूर! मैंने देखा कि वह रानी साहिबा की तरह ही चलने की कोशिश करती है। रानीजी का नहाना देख कर वह भी पेड़ की डालों पर नहाने का अभिनय करने लगी। इतना ही नहीं, मैंने उसे रानी साहिबा की तरह मुस्कुराने की कोशिश भी करते देखा।' वह वाचाल दासी बोली। उसकी ऐसी बातें सुन कर राजा के सारे

बदन में आग लग गई। उसने सोचा—'इस गुस्ताख को तुरंत फाँसी की सजा दे देनी चाहिए!' लेकिन इतने में रत्नहार की याद जो आई तो चुप रह गए।

'अच्छा, तू कहती है कि उसी बन्दरी ने रत्नहार चुरा लिया होगा। ठीक है, मगर यह कैसे मालूम हो कि उसने उसे कहाँ छिपा रखा है?' राजा गुस्सा पी गया और बोला।

'यह तो कोई मुश्किल बात नहीं! हुजूर!' दासी बोली और मुसकुराने लगी।

'मुश्किल क्यों नहीं?' राजाने क्रोधित होकर पूछा।

'अच्छा! बताइए, रानी जी वह हार कब पहनती हैं? जब आप महल में रहते हैं तभी न?' दासी ने पूछा।

'हो सकता है!' राजा ने त्योरियाँ चढ़ा कर कहा।

'हुजूर को गुस्सा आ रहा है; इसलिए मैं कुछ भी कहने का साहस नहीं कर सकती। सुनिए, अगर आप जानना चाहें कि उस बन्दरी ने रत्नहार कहाँ छिपा रखा है तो जाइए, एक बन्दर ले आइए! इसके अलावा और कोई चारा नहीं।' दासी ने कहा।

दासी की बातें सुन कर राजा को मन ही मन बड़ी हँसी आई। उसने जान लिया यह मुँहफट लौंडी उस को एक बन्दर और उसकी रानी को एक बन्दरी से उपमा दे रही है। फिर भी रत्नहार तो वह गँवा नहीं सकता था। इसलिए चुप रह गया। बस, राजा का हुक्म पाते ही सिपाही दौड़ गए और एक बन्दर पकड़ लाए। उस बन्दर को राजा की सी पोशाक पहनाई गई। फिर उस को साथ लेकर राजा-मन्त्री आदि दल-बल सीधे उस उपवन में गए।

पेड़ों पर रहने वाली उस बन्दरी ने इस बारात को देखा। तुरंत एक छलाँग मार कर वह नीचे की डाल पर कूदी और पेड़ के खोखले में से रत्नहार निकाल लिया। फिर उसे गले में पहन कर, रानी की ही तरह हाव-भाव दिखाती हुई बन्दर की ओर बढ़ी।

इशारा पाते ही सिपाहियों ने बन्दरी को पकड़ लिया और गले में का रत्नहार छीन लिया। वह बेचारी बिलखाती हुई फिर पेड़ पर चढ़ गई।

तुरंत निर्दोष अभियुक्तों को छोड़ दिया गया। राजा-मन्त्री आदि ने दासी की बुद्धिमानी की बड़ी प्रशंसा की।
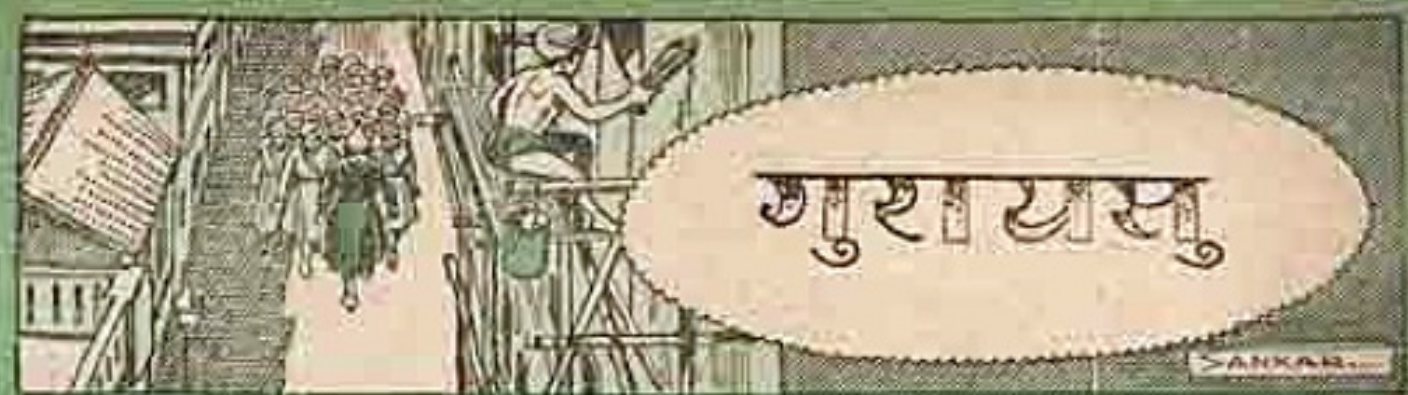
एक बार गुरु गोविन्दसिंहजी आनन्द-पुर की सड़क पर पैदल ही चल रहे थे। वे उस दिन बड़े कीमती कपड़े पहने हुए थे। उनके पीछे पीछे चेलों का एक दल चल रहा था।

कुछ दूर जाने के बाद उन्हें एक बड़ी ही संकरी गली से जाना पड़ा। उसी गली में एक मकान था, जिसकी दीवार पर एक राज कुछ मरम्मत कर रहा था।

गुरुजी नीचे से जा रहे थे कि अचानक राजा की लापरवाही से चूने के छींटे उछल कर उनकी पोशाक पर पड़े।

यह देख कर गुरुजी के चेलों को बहुत क्रोध आ गया। वे बोले—'इस बेवकूफ़ की आँखें सिर चढ़ गई हैं। देखता भी नहीं कि कौन जा रहे हैं!' गुरु गोविन्दजी रुक गए। राज नीचे उतर आया। गुरु गोविन्द ने एक चेले से कहा—'दण्ड के रूप में इसे एक तमाचा लगा दो।' गुरु के कहने भर की देर थी कि तुरन्त एक-एक चेले ने राज के मुँह पर एक एक तमाचा जड़ दिया। बेचारे का मुँह लाल हो गया। उसने कहा—'देव! गलती मेरी थी। दीन पर कृपा कीजिए।'

तब गुरु ने उसे माफ़ कर दिया और अपने चेलों से बोले—'मैंने इसे एक ही तमाचा लगाने को कहा था। फिर हर एक ने एक एक तमाचा क्यों मार दिया?'

चेलों के मुँह से कोई बात न निकली। बस, एक दूसरे का मुँह ताकते रह गए। आखिर एक चेले ने साहस करके आगे बढ़ कर कहा—'गुरुजी! आपने किसी एक को यह काम करने को नहीं कहा था। इसलिए हरेक ने समझा कि यह हुक्म उसी के लिए है। गुरु की आज्ञा पूरी करने की उतावली में हरेक ने उसे एक एक तमाचा लगा दिया।'

हरबोलसिंह

तब गुरु ने राज से पूछा—'क्यों बेटा! तुम्हारा ब्याह हो गया है?'

'नहीं; मैं कुँआरा हूँ!' उसने जवाब दिया।

तब गुरु ने अपने चेलों से कहा—'तुम सभी मेरे प्यारे चेले हो। मेरा हुक्म बजा लाने में तुम में से कोई नहीं हिचकिचाता। मैंने इस राज को एक तमाचा लगाने का हुक्म दिया। हरेक ने एक एक तमाचा लगा दिया। इससे विदित होता है कि तुम लोग कितने आज्ञाकारी हो! अब इसी के बारे में मैं और एक आज्ञा देता हूँ। इस बेचारे का अभी ब्याह नहीं हुआ है। तुम में से जिसके घर सयानी लड़की हो, वह इसे अपना दामाद बना ले।' गुरु की यह अनोखी आज्ञा सुन कर चेले सभी हक्के-बक्के से रह गए। अन्त में एक चेले ने आगे बढ़ कर कहा—'मेरे एक सयानी लड़की है। मैं इस जवान को अपना दामाद बना कर गुरु की आज्ञा पूरी करने को तैयार हूँ।' यह सुन कर गुरु गोविन्दसिंह उस चेले की बड़ी प्रशंसा करने लगे। बाकी चेलों ने शरम से सिर झुका लिया। गुरु ने उस आज्ञाकारी चेले को आशीर्वाद दिया और कहा—'आज्ञा चाहे कितनी ही अप्रिय क्यों न हो, पूरी होनी चाहिए। जो प्रिय आज्ञा पूरी करने में तत्परता दिखाता है और अप्रिय आज्ञा पूरी करने में हिचकिचाता है, उसे आज्ञाकारी नहीं कहा जा सकता। जो अपनी आज्ञाकारिता की डींग हाँकते हैं उन्हें इस बात का ध्यान रखना चाहिए।'
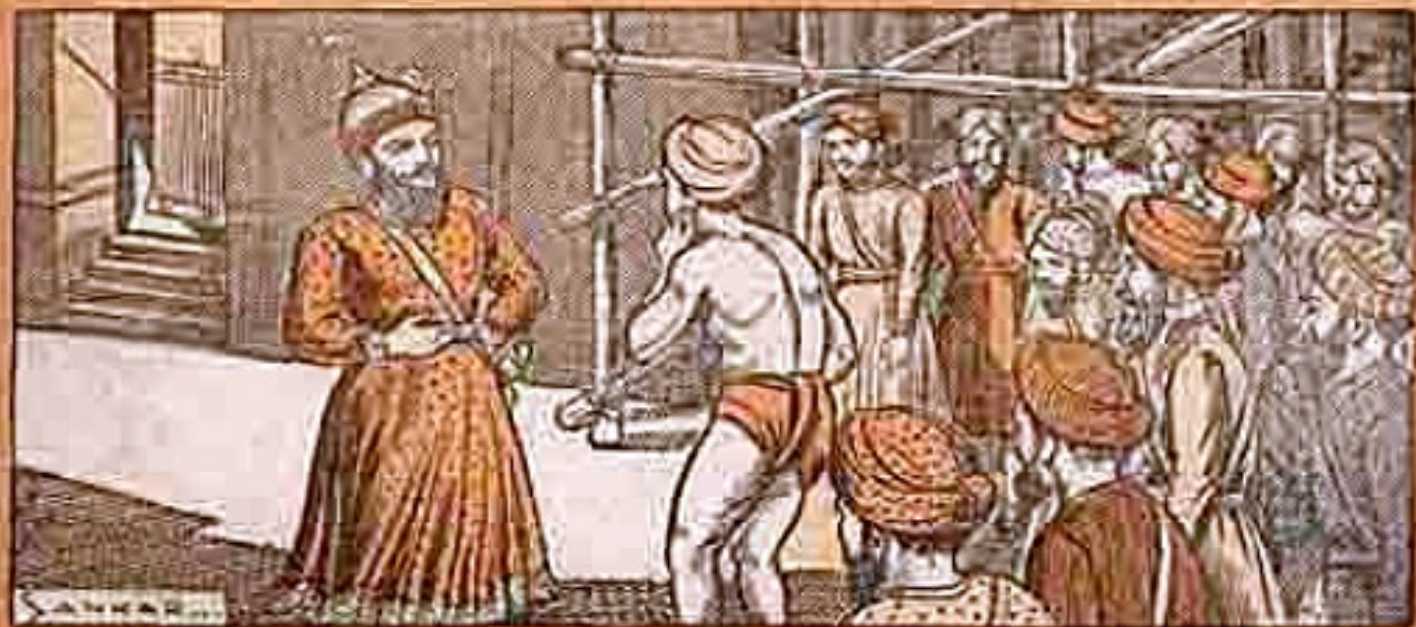
साबुन का बुलबुला कैसे बनता है ?

छोटे छोटे जल-कण जिन से साबुन का बुलबुला बनता है एक विचित्र शक्ति के प्रभाव से जिसे हम 'सतह का तनाव' कहते हैं, आपस में जुटे रहते हैं।

सतह का तनाव एक ऐसी ताकत है जो तरल पदार्थों की सतह के कणों पर काम करती है। इस के प्रभाव से सभी कण एक दूसरे को अपनी ओर खींचते हैं और बिलग होने की अपेक्षा आपस में जुटे रहना ही पसंद करते हैं।

इस तरह इन जल-कणों का समूह एक लचीली त्वचा सी बनाता है। जब गिलास में पानी भरा रहता है तो सतह पर एक वर्तुल त्वचा सी बन जाती है जिस से पानी छलक नहीं जाता। हरेक तरल पदार्थ की सतह पर ऐसी ही एक त्वचा होती है। लेकिन बुलबुला तो सतह ही सतह है; अन्दर कुछ होता नहीं। यह तो सिर्फ उपरुक्त एक लचीली त्वचा है जो हवा के दबाव से तन जाती है। हवा का दबाव सभी दिशाओं में होता है; सभी कण एक दूसरे को खींचते हैं; इसलिए यह त्वचा एक गुब्बारे की तरह भर कर तन जाती है। लेकिन बुलबुले क्षण-भंगुर होते हैं; क्योंकि वे कण जिन के आपस में जुटे रहने से यह त्वचा बनती है अन्य सभी कणों की तरह गुरुत्वाकर्षण से बंधे होते हैं। वे अन्दर की हवा के दबाव से तन ही नहीं जाते हैं; बलिक गुरुत्वाकर्षण से नीचे की ओर खींचे जाते हैं और यह दूसरी शक्ति 'सतह के तनाव' से ज्यादा बलवती होती है। इसलिए क्रमशः कुछ कण नीचे बह जाते हैं; बुलबुला पतला बन कर कमजोर हो जाता है और अन्त में ऐसी हालत आ जाती है कि वह अन्दर की हवा के दबाव को रोक नहीं सकता और फूट जाता है।

साँझ का वक्त था। शान्तिसिंह जो अपने कुछ साथियों के साथ [illegible] के एक जमींदार के यहां दावत [illegible] घर लौट रहा था। नजदी[illegible] कि 'रत्न-दुर्ग' में [illegible] यह कोई मामूली निस्तब्धता नहीं थी। इस में कोई खासियत थी।

शान्तिसिंह को आश्चर्य के साथ साथ आशङ्का भी हुई। घोड़े से उतर कर देखा तो फाटक टूटा हुआ था। अन्दर जाने पर चारों ओर सिपाहियों की लाशें बिखरी पड़ी दिखाई दीं। यहां तक कि औरतों और बच्चों को भी नहीं छोड़ा गया था। रनवास में घुसते ही पहले-पहल उसकी नजर अपने भाई के बच्चे की लाश पर पड़ी। बगल में ही उसकी भाभी पड़ी थीं जिन्होंने आत्महत्या कर ली थी। देखते ही मालूम हो जाता था कि उन के गहने वगैरह किसी ने जबर्दस्ती छीन लिए हैं। बेचारा शान्तिसिंह यह हत्याकाण्ड देख कर स्तब्ध रह गया।

इतने में प्राङ्गण के एक कोने में से किसी के कराहने की आवाज सुनाई दी। शान्तिसिंह ने वहां जाकर देखा तो पुरोहित जी दम तोड़ रहे थे। शान्तिसिंह को देख कर वे बड़े कष्ट से इतना बोल सके—'बेटा! क्रूरसिंह ने दुर्ग पर चढ़ाई कर दी। अपने सिपाही सभी असावधान थे। इसके अलावा किसी विश्वास-घाती ने दुश्मन को हमारे सभी राज बता दिए थे। इसलिए तुम्हारे भाई यों ही हार गए।

दुश्मनों के अत्याचारों का ठिकाना न रहा। औरतों-बच्चों को भी मार कर सारा किला लूट लिया; राजमहल का कोना-कोना छान मारा। फिर भी जिस रत्न के लिए उन्होंने यह लूट-खसोट मचाई थी, वह उन्हें न मिला। तुम्हारी भाभी ने सोचा—'ये दुष्ट अगर

रघुवर सहाय

पर हाथ लगाने का साहस न कर सकेंगे!' मरते वक्त यह रत्न मुझे दे गईं। लो, अपनी थाती!' इतना कहते कहते पुरोहित की आँखें आखिरी बार चमक उठीं। मालिक का माल हिफ़ाजत से सौंप कर वे निश्चिन्त होकर चल बसे।

शान्तिसिंह उस अमूल्य रत्न को कमर-बन्द में खोंस कर जल्दी से बाहर निकला। उसके लिए एक-बारगी दुनिया ही अँधेरी हो गई। सारा किला श्मशान की तरह सूना पड़ा था।

यह नहीं कि वह क्रूरसिंह को नहीं जानता था। वह पड़ोस के सिंह-दुर्ग का ही स्वामी था। बड़ा जालिम आदमी था। रत्न-दुर्ग के राजवंश से उसका पुश्तैनी दुश्मनी थी। फिर रत्न-दुर्ग के राजवंश के उस अमूल्य रत्न पर तो उसकी आँखें बहुत दिनों से गड़ी हुई थीं।

'फिर क्या? समय मिला और जालिम ने अपना वार किया।' शान्तिसिंह ने सोचा। अब उसका उस किले में एक क्षण भी रहने का मन न हुआ। इसलिए वह घोड़े पर सवार हो कर अपने इने-गिने साथियों के साथ उत्तर की ओर रवाना हुआ।

मगर एक विश्वास-घाती ने उसको जाते देख लिया। वह भी उन जासूसों में से एक था जिन्होंने क्रूरसिंह को दुर्ग का सारा भेद बता दिया था। वह तुरंत उस पहाड़ी पर गया, जहाँ क्रूरसिंह अपनी सेना के साथ ठहरा हुआ था। 'मैं बता सकता हूँ कि रत्न-दुर्ग का अमूल्य रत्न कहाँ है! मुझे क्या इनाम मिलेगा?' उसने क्रूरसिंह से जाकर कहा। 'हजार अशर्फियाँ दूँगा।' क्रूरसिंह ने कहा। सौदा पट गया। क्रूरसिंह ने कहा कि वह पेशगी दो सौ अशर्फियाँ देगा और भेद बताने के बाद बाकी रकम दे देगा।

यह कह कर उसने दो सौ अशर्फियाँ दे दीं। तब उस विश्वास-घाती ने उसे बता दिया कि 'रत्न शान्तिसिंह की कमर-बन्द में है और वह अपने साथियों के साथ उत्तर की ओर जा रहा है।'

तब क्रूरसिंह ने बाकी अशर्फियाँ भी दे दीं और कहा—'भेद के लिए मैं वादे के मुताबिक हजार अशर्फियाँ दे चुका। अब तुम्हें विश्वासघात का फल भी चखाना है।' यह कह कर उसने छुरा निकाल कर उस विश्वास-घाती की छाती में भोंक दिया और लाश को वहीं छोड़ कर कुछ सिपाहियों के साथ शान्तिसिंह का पीछा करने लगा।

थोड़ी देर बाद शान्तिसिंह को पता चल गया कि कोई उसका पीछा कर रहा है। तुरंत उसने अपने साथियों को चेताया और घोड़ा वेग से दौड़ाने लगा। लेकिन कोई फायदा न हुआ। दुश्मन पीछा करते ही रहे। धीरे धीरे वे लोग नजदीक होते आए।

शान्तिसिंह ने अपने साथियों को दूसरी तरफ मुड़ जाने को कहा और अकेले ही आगे बढ़ चला। उसे यह अच्छी तरह मालूम था कि उसके पास जो रत्न है, उसी के लिए दुश्मन उस का पीछा कर रहे हैं। इसलिए वे उसके साथियों का पीछा नहीं करेंगे। हुआ भी ऐसा ही। उसके साथी साफ निकल गए।

शान्तिसिंह का अरबी घोड़ा हवा से बातें करने लगा। उसकी तेजी ही उसे दुश्मनों से बचाने लगी। फिर भी दुश्मनों ने हार नहीं मानी। पीछा करते ही रहे।

दिन ढल गया। शान्तिसिंह ने पीछे फिर कर देखा तो मालूम हुआ कि क्रूरसिंह के सिपाही भी पिछड़ गए हैं। वह अकेला ही उसका पीछा कर रहा है। अब उसके सफेद अरबी घोड़े और क्रूरसिंह के काले घोड़े में होड़ शुरू हुई। लेकिन शान्तिसिंह

का घोड़ा बेहद थक गया था। इधर क्रूरसिंह बहुत नजदीक आ गया था। इसलिए उसने घोड़ा रोक दिया और निशाना लगा कर क्रूरसिंह पर अपना भाला फेंका। लेकिन क्रूरसिंह ने घोड़ा हटा लिया जिससे भाला उसे न लग कर उसके घोड़े को ही लगा। तुरंत वह नीचे गिर पड़ा। सवार भी नीचे गिर पड़ा और इस तरह पड़ा रहा जैसे उसे कड़ी चोट आई हो।

शान्तिसिंह निश्शंक होकर उसके नजदीक गया। तुरंत क्रूरसिंह ने उछल कर उसकी कमर पकड़ ली। बेचारा शान्तिसिंह हका-बका सा रह गया। अन्त में दोनों छुरे निकाल कर भिड़ गए। बड़ी देर तक छुरेबाजी चलती रही। अन्त में क्रूरसिंह ने तलवार निकाल ली। शान्तिसिंह ने भी तलवार निकाल कर उसका सामना किया। इस संघर्ष में उसकी छाती पर बड़ी चोट लगी। खून की धार बह चली। फिर भी वह जान पर खेल कर लड़ता ही रहा। अन्त में उसने उछल कर एक ऐसा वार किया कि क्रूरसिंह का सिर धड़ से जुदा हो गया और धूल में लोटने लगा। शान्तिसिंह ने बदला चुका लिया।

लेकिन बेचारा बहुत ही थक गया था। फिर भी वहाँ रुका नहीं; आगे बढ़ता ही गया। क्योंकि क्रूरसिंह के साथियों के आ जाने का डर था।

सवेरा होते होते शान्तिसिंह काश्मीर की घाटियों में पहुँच गया। हरे भरे पेड़, चहचहाती चिड़ियाँ और निकट ही कल-कल-नाद करते बहते हुए झरनों को देख कर उसका चित्त प्रसन्न हो गया। सारी थकान दूर हुई सी जान पड़ने लगी। वह भी भूल गया कि वह काल के मुँह से बच कर आ रहा है। थोड़ी दूर पर जब उसे एक सुन्दर बगीचा दिखाई दिया तो वह

उस में घुस गया और एक संगमर्मर के चबूतरे पर लेट कर, तुरंत सो गया।

वह बगीचा था उस प्रान्त के स्वामी ध्यानसिंह की इकलौती बेटी सुमित्रा का। वह अपनी सखियों के साथ बगीचे में टहलने आई थी। वहाँ कोई नहीं आ सकता था; इसलिए निश्शंक होकर उछल-कूद रही थी।

इतने में सोते हुए शान्तिसिंह पर उसकी नजर पड़ी। बेचारी लजा कर लौटने लगी। मगर उसका सुन्दर रूप देख कर लौटने का मन न हुआ। उसी समय शान्तिसिंह की नींद टूट गई। उसने भी राजकुमारी सुमित्रा को देख लिया। तुरंत उठ कर प्रणाम किया। राजकुमारी शरम से सिर झुका कर वहाँ से लौट गई।

लेकिन लौटते वक्त वह शान्तिसिंह का हृदय भी अपने साथ लेती गई थी। वह बेचारा राजकुमारी को देख कर बावला सा हो गया था। लेकिन राजकुमारी को चाहना क्या था, बौने का चाँद को छूने के लिए हाथ पसारना था। बेचारा सोच में पड़ गया। अन्त में उसे उस अमूल्य रत्न की याद आई। बस, उसके मन में जरा आशा जाग उठी।

उसने तुरंत सुमित्रा के पिता के पास जाकर वह रत्न दिखाया और अपना परिचय दिया। उस रत्न को देखते ही सुमित्रा का पिता उसके स्वामी को भी पहचान गया। क्योंकि वह रत्न सारे संसार में विख्यात था। सुमित्रा के पिता ने शान्तिसिंह की बड़ी खातिर की और अपने यहाँ रख लिया।

साल बीतते बीतते बड़ी धूम-धाम के साथ सुमित्रा और शान्तिसिंह की शादी हो गई। जिस अशुभदाई रत्न ने उसके भाई का हरा-भरा घर उजाड़ दिया था उसी ने आज शान्तिसिंह का घर बसा दिया था!

चुगली करने का फल!

'अशोक' बी. ए.

आओ बच्चो! तुम्हें सुनाऊँ
सच्ची एक कहानी!
किसी एक छोटे से वनकी
है यह बात पुरानी।

पड़ा शेर बीमार अचानक
वन के सब पशु आये!
पूछ कुशलता, आदरपूर्वक
सबने शीस झुकाये।

अवसर देख कहा चीते ने
"नहीं लोमड़ी आई!
उसे घमंड हुआ है इतना
नहीं देखने आई।"

बस, शेर ने उसे बुलवाकर
पूछा—"सच बतलाओ?
क्यों न अभी तक तू आई थी,
कारण सब समझाओ।"

चीते ने ही चुगली की है
जब उसने यह जाना।
'चुगली का बदला मैं लूँगी'
उसने मन में ठाना।

"खोज रही थी वैद्यराज को"
बोली शीस झुका कर!
बोला शेर—"वैद्य ने जो कुछ
कहा, कहो समझा कर"।

वह बोली—'मैं कहूँ कान में?'
बोला शेर—"बताओ?"
"यदि चीते की खाल ओढ़ लो
तो चंगे हो जाओ।"

यह सुन कर वह शेर तुरत ही
चीते पर चढ़ बैठा!
कर न सका कुछ भी बेचारा
गया वहीं पर ऐंठा।

चतुराई से जान बचा कर
भगी लोमड़ी वन में!
चुगली कभी न करना बच्चो!
याद रखो यह मन में।

बताओ तो ?

*

१. तीन अक्षर, भगवान बुद्ध के पुत्र का नाम। अन्त का अक्षर काटने से एक ग्रह का नाम, बीच का अक्षर काटने से धूप। हिन्दी के एक सुप्रसिद्ध पण्डित भी।

२. तीन अक्षर, आग। पहला अक्षर काटने से वर्ष। आखिरी अक्षर काटने से पृथ्वी।

३. तीन अक्षर, एक सुप्रसिद्ध बौद्ध सम्राट और वृक्ष-विशेष, अर्थ 'जिसे कोई दुःख न हो।'

४. दो अक्षर, एक अनाज और मुसलमानों का प्रसिद्ध तीर्थ। इसके पीछे 'र' लगा देने से 'धूर्त' बन जाता है।

५. तीन अक्षर; एक ऋतु। पहला अक्षर काटने से काबू, दूसरा अक्षर काटने से नजदीक और आखिरी अक्षर काटने से चौथाई हिस्सा अर्थ होता है।

बता न सको तो जवाब केलिए ५६-वाँ पृष्ठ देखो !

पूरा करो !

*

नीचे दाईं ओर कुछ ऐसे शब्द दिए गए हैं, जिन में हरेक के अन्त में 'धान' आता है। समझ लो कि 'धान' के आगे जितने नुक्ते हैं, उतने अक्षर वहाँ से गायब हैं। शब्द को पूरा करो। पूरे शब्द का जो माने होता है, वह नीचे बाईं ओर दिया गया है। पूरा करने के बाद ऐसे ही कुछ और शब्द सोच कर लिख लेना।

१. मुख्य . धान
२. नाम . . धान
३. जगह . . धान
४. देखरेख . . . धान
५. नई शासन-प्रणाली . . . . धान
६. खोज . . . धान
७. ध्यान . . धान
८. तकिया . . धान
९. खजाना . धान

पूरा न कर सको तो जवाब के लिए ५६-वाँ पृष्ठ देखो !

रंगीन चित्र-कथा, पाँचवा चित्र

उस अपूर्व सुन्दरी ने अपने शाप की कहानी यों सुनाई—'हे राजकुमार ! मेरा नाम रत्नमाला है । मेरी माता को बाग-बगीचों में सैर-सपाटा करने का बड़ा शौक था । इसलिए जहाँ कोई बाग-बगीचा दिखाई देता कि उसका मन उस में सैर करने को ललचा जाता ।

एक दिन जब उसने एक सुन्दर बगीचा देखा तो उस में घुस गई और पेड़ से फल तोड़ने लगी । ज्यों ही उसने फलों पर हाथ लगाया कि एक बूढ़ी डाइन वहाँ आ गई । उसने मेरी माँ से कहा—'लड़की ! एक वादा करो तो मैं तुम्हें जितने फल चाहो, खाने दूँ ।'' मेरी माँ ने कहा—'अच्छा, बोलो !' तब बूढ़ी डाइन ने कहा—'तुम्हें अपनी पहिली संतान को मुझे दे देना होगा ।' मेरी माँ ने उसी प्रकार वादा किया और जी भर कर फल खा लिए । और कुछ दिन बाद मैंने जन्म लिया । माता-पिता मुझे बड़े यतन से छुपा कर पालने लगे । लेकिन यह बात किसी तरह बूढ़ी डाइन को मालूम हो गई । उसे बड़ा गुस्सा आया । उसने एक जादू के साँप को हमारे राज्य में भेजा, जो एक एक कर बहुत से लोगों को खा जाने लगा । अन्त में जब माता-पिता ने मुझे डाइन को सौंप दिया तभी वह साँप हमारा राज्य छोड़ कर चला गया । मैं अपनी सखियों के साथ डाइन के महल में रहने लगी । एक दिन जब एक सुन्दर राजकुमार इस ओर आया तो मैं उससे बातें करने लगी । डाइन ने देख लिया और मुझे सखियों सहित बिल्लियों के रूप में बदल दिया । उसने हमारी सेवा के लिए जादू के हाथों को नियुक्त किया ।

एक दिन बहुत गिड़गिड़ाने पर बूढ़ी डाइन ने तरस खाकर कहा—'बेटी ! तुम जिस राजकुमार को देख कर मुग्ध हो गई थी वही अन्त में तुम्हारा शाप छुड़ाएगा ।' उस दिन से मैं उस राजकुमार का एक चित्र रख कर रोज उसकी पूजा करने लगी । प्यारे कृपासेन ! तुम्हीं वह राजकुमार हो जिस ने मेरा शाप छुड़ाया ।' रत्नमाला ने अपनी कहानी खतम की ।

चन्दामामा पहेली

बायें से दायें :

1. निर्मल	12. एक जानवर
3. औरत	13. यात्रा
6. शिकस्त	15. कन
8. चैन	17. प्रवाह
9. चौक	19. विद्रोह
11. एक बाजा	20. धिक्कार
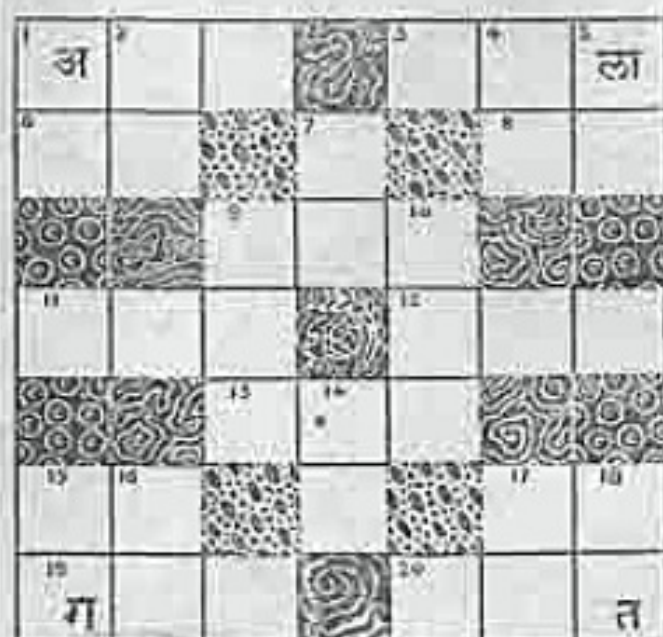
ऊपर से नीचे :

1. अमावस	10. उपस्थित
2. गम	14. मेवा
4. बगुला	15. कलङ्क
5. रतन	16. शब्द
7. उपाय	17. एक अस्त्र
9. चौकन्ना	18. रात्रि

फोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता

जुलाई - प्रतियोगिता - फल

*

जुलाई के फोटो के लिए निम्नलिखित परिचयोक्तियाँ चुनी गई हैं। इनकी प्रेषिका को १०) का पुरस्कार मिलेगा।

परिचयोक्तियाँ :

पहला फोटो : धूम्र-धूसर
दूसरा फोटो : धूलि-धूसर

प्रेषिका : सरोजिनी गुलटी, देहली.

ये पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ प्रेषिका के नाम-सहित जुलाई के चन्दामामा में प्रकाशित होंगी। जुलाई के अङ्क के प्रकाशित होते ही पुरस्कार की रकम भेज दी जाएगी।

अगस्त की प्रतियोगिता के लिए बगल का पृष्ठ देखिए।

एक अनिवार्य सूचना :

परिचयोक्तियाँ बगल के पृष्ठ के कूपन पर ही लिख कर भेजनी चाहिए। तीन पैसे का स्टाम्प लगा कर बुक-पोस्ट में भेजी जा सकती हैं। साथ में कोई चिठ्ठी न हो।

फोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता

अगस्त १९५३ :: पारितोषक १०)

★ ऊपर के फोटो अगस्त के अङ्क में छापे जाएँगे। इनके लिए उपयुक्त परिचयोक्तियाँ चाहिए।

★ परिचयोक्ति फोटो के उपयुक्त हो। तीन-चार शब्द से ज्यादा न हों। पहले और दूसरे फोटो की परिचयोक्तियों में परस्पर सम्बन्ध हो। परिचयोक्तियाँ, पूरे नाम और पते के साथ कूपन पर ही लिख कर भेजनी चाहिए। १०. जून के अन्दर ही हमें पहुँच जानी चाहिए।

★ प्राप्त परिचयोक्तियों की सर्वोत्तम जोड़ी के लिए १०) का पुरस्कार दिया जाएगा।

★ परिचयोक्तियाँ भेजने का पता :

फोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता
चन्दामामा प्रकाशन
वडपलनी :: मद्रास-२६.

→ चन्दामामा - फोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता - कूपन ←

पहले फोटो की परिचयोक्ति .... दूसरे फोटो की परिचयोक्ति ....

भेजनेवाले का नाम ....

पूरा पता ....

चिड़िया

[अनन्तनारायण राम]

प्यारी चिड़िया प्यारी चिड़िया !
अच्छी चिड़िया नन्हीं चिड़िया !

उड़ कर मेरे हाथ पर आ जा ।
हाथ में आकर गीत सुना जा ।

आ मिल कर हम दोनों गाएँ ।
माताजी का दिल बहलाएँ ।

मेरे हाथ का दाना खा ले ।
डरती क्यों है, आके उठा ले ।

लो, मैं हाथ को ऊँचा कर दूँ ।
मुँह खोलो तो मुँह में धर दूँ ।

अच्छी चिड़िया, तकती क्या है ?
डर कर दूर सरकती क्या है ?

मैंने अपने पास बुलाया ।
उलटा तूने शोर मचाया ।

कड़वी बात कही क्या ऐसी:
खूँटी पर ये चूँ चूँ कैसी ?

आहा ! आखिर आ गई तो !
हाथ का दाना खा गई तो !

थोड़ा सा अब पानी पी ले ।
फिर मैं सुनूँगा गीत रसीले ।

चन्दामामा पहेली का जवाब :

अ	म	ल		अ	व	ला
मा	त		चा		क	ल
		चौ	रा	हा		
ढो	ल	क		जि	रा	फी
		स	फ	र		
दा	ना		ल		धा	रा
ग	द	र		ला	न	त

'बताओ तो?' का जवाब :

१. राहुल २. रसाल ३. अशोक
४. मक्का ५. रावन

'पूरा करो' का जवाब :

१. प्रधान २. अभिधान ३. समाधान
४. तत्वावधान ५. नवसंविधान
६. अनुसंधान. ७. अवधान
८. उपधान ९. निधान

Printed by B. NAGI REDDI at the B. N. K. Press Ltd., Madras 26 and Published by him from Chandamama Publications, Madras 26. Controlling Editor: SRI CHAKRAPANI

Photo by D. J. Chanthamian

पुरस्कृत परिचयोक्ति

प्रेम - पाश

प्रेषिका : कुमारी मंगला अरोड़ा, कानपुर

रङ्गीन चित्र-कथा, चित्र – ५